

राजा बलदेवदास विद्या प्रकाशना—१

नाथ सिद्धों की वानियाँ

संपादन
हजारीप्रसाद द्विवेदी



HSB
811.12
H 127 N

विचारविधि सभा, काशी

• 2 E

विद्वला मंथमाला--१

M. S. Sivastava Collection

नाथ सिद्धों की बानियाँ

H. S. Sivastava

HARI SHANKER SRIVASTAVA

M. A.; PH. D.; F. R. A. S. (London)

Professor of History, Department of History

UNIVERSITY OF GORAKHPUR

संपादक

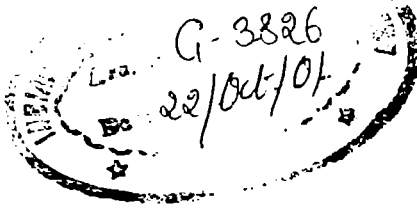
हजारीप्रसाद द्विवेदी



नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
मुद्रक : महतावराय, नागरी मुद्रण, काशी
प्रथम संस्करण, १००० प्रतियाँ, संवत् २०१४ वि०
मूल्य ४)

HSH
811.12
H127N



Library

IAS, Shimla

HSH 811.12 H 127 N



G3826



राजा वलदेवदास विडला

राजा बलदेवदास त्रिडला-ग्रंथमाला

प्रस्तुत ग्रंथमाला के प्रकाशन का एक संक्षिप्त सा इतिहास है। उच्च प्रदेश के राज्यपाल महामहिम श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी जब काशी नागरीप्रचारिणी सभा में पधारे थे तो यहाँ के सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथों को देखकर उन्होंने सलाह दी थी कि एक ऐसी ग्रंथमाला निकाली जाय जिसमें सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रंथ मुद्रित कर दिए जाएँ। बहुत अधिक परिश्रमपूर्वक संपादित ग्रंथ छापने के लोभ में पड़कर अनेकानेक महत्वपूर्ण ग्रंथों को अमुद्रित रहने देना उनके मत से बहुत बुद्धिमानी का काम नहीं है। उन्होंने सलाह दी कि पुस्तकें पहले मुद्रित हो जाएँ फिर विद्वानों को उनकी सामग्री के विषय में विचारने का अवसर मिलेगा। सभा के कार्यकर्ताओं को राज्यपाल महोदय की यह सलाह पसंद आई। हीरकजयंती के अवसर पर सभा ने जिन कई महत्वपूर्ण कार्यों की योजना बनाई उनमें एक ऐसी ग्रंथमाला का प्रकाशन भी था। सभा का प्रतिनिधिमंडल जब इन योजनाओं के लिये धनसंग्रह करने के उद्देश्य से दिल्ली गया तो सुप्रसिद्ध दानवीर सेठ घनश्यामदास जी त्रिडला से मिला और उनके सामने इन योजनाओं को रखा। त्रिडलाजी ने सहर्ष इस ग्रंथमाला के लिये २५०००) २० की सहायता देना स्वीकार कर लिया और सभा के प्रतिनिधिमंडल को इस विषय में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं हुई। त्रिडला परिवार की उदारता से आज भारतवर्ष का बच्चा बच्चा परिचित है। इस परिवार ने भारतवर्ष के सांस्कृतिक उत्थान के लिये अनेक महत्वपूर्ण दान दिए हैं। सभा को इस प्रकार की ग्रंथमाला के लिये प्रदत्त दान भी उन्हीं महत्वपूर्ण दानों की कोटि में आएगा। सभा ने निर्णय किया कि इन रूपयों से प्रकाशित होनेवाली ग्रंथमाला का नाम श्री घनश्यामदास जी त्रिडला के पूज्यपिता राजा बलदेवदास जी त्रिडला के नाम पर रखा जाय और इसकी आय इसी कार्य में लगती रहे।

परिचय

जह मन पवन न सञ्चरइ,
रवि शशि नाह प्रवेश ।
तहि वट चित्त विसाम करु
सरहे कहिअ उवेश ॥

[जहाँ तक न मन जाता है न पवन जाता है, जहाँ न रवि का प्रवेश है न शशि का प्रवेश है, सरह कहते हैं कि हे चित्त ! तुम वहीं विश्राम करो ।]

सिद्ध सरहपा ने उक्त दोहों में जिस समाधि-दशा का सङ्केत किया है उसकी प्राप्ति के लिए गम्भीर साधना आवश्यक है और इसीलिए उस स्थान तक चित्तगति को ले जाने के लिए जहाँ 'न सूर्यो भाति न शशाङ्को न पावक' साधकगण साधनाएँ करते रहे हैं, जिसका यह स्वाभाविक परिणाम है कि--हमारे देश में सिद्ध, साधना और साधकों की चर्चा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। वैसे तो किसी भी कार्य का निरंतर अभ्यास करना साधना कहा जाता है। साधना करनेवाला साधक कहलाता है और उस कार्य में निरंतर अभ्यास द्वारा सफलता अथवा सिद्धि प्राप्त करनेवाला सिद्ध कहलाने का अधिकारी होता है।

हमारी संस्कृति ने यह बहुत पहले ही स्वीकार कर लिया था कि 'रुचीनां वैचिञ्चयात् ऋजुकुटिलनानापथजुगाम् नृणामेकोगम्यस्त्वमसि-पयसामर्णव इव' अर्थात् जैसे टेढ़े सीधी बहती हुई सभी नदियाँ अन्त में समुद्र में ही पहुँचती हैं वैसे ही रुचि भेद के कारण टेढ़ा सीधा साधना पथ अपनाकर सभी साधक अन्त में उसी भगवान तक ही पहुँचते हैं। ऐसी ही मान्यता के फलस्वरूप हमारा भारत विभिन्न धार्मिक साधनाओं का क्षेत्र रहा है। फलतः प्रत्येक संप्रदाय के सिद्ध भी रहे हैं। इस प्रकार नाथ संप्रदाय के सिद्ध नाथसिद्ध कहलाते हैं। इन्हीं में से चौबीस सिद्धों की रचनाएँ प्रस्तुत ग्रंथ में संपादित की गयी हैं।

स्वर्गीय डाक्टर पीतांबरदत्त बड़धवाल ने गोरखवानी की भूमिका में गोरखनाथके अतिरिक्त अन्य नाथसिद्धों की बानियों को भी प्रकाशित करने की घोषणा की थी किन्तु असमय ही अकस्मात् देहांत हो जाने के कारण यह कार्य न हो पाया। डाक्टर बड़धवाल के इस महान् अधूरे कार्य को प्रस्तुत संग्रह द्वारा पूरा करने का प्रयत्न किया गया है। डाक्टर बड़धवाल ने नाथ सिद्धों की रचनाओं का संग्रह भी कर लिया था। परंतु इस संग्रह ग्रंथ 'नाथ सिद्धों की बानियाँ' की भूमिका से यह स्पष्ट नहीं होता कि संग्रहकर्ता ने डाक्टर बड़धवाल के संग्रह से सहायता ली है या नहीं। संकेत तो यही है कि विद्वान् संपादक को डाक्टर बड़धवाल का संग्रह नहीं मिला।

इस संग्रह में प्रयुक्त पोथियाँ हस्तलिखित रूप में नागरीप्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय से ली गई हैं। इसके अतिरिक्त पिंडी के जैन भांडार, कर्मद्र मठ तथा दर्वार लाइब्रेरी जोधपुर से भी कुछ पुस्तकें प्राप्त कर उनका उपयोग प्रस्तुत संग्रह में किया गया है। अच्छा होता यदि बड़धवालजी द्वारा संगृहीत हस्तलिखित पोथियों का भी भलीभाँति उपयोग कर लिया जाता। जितनी पोथियाँ प्रकाशित की जा रही हैं उनकी भाषा १५-१६ वीं शताब्दी के बाद की है। गोरखवानी की भाषा के विषय में डाक्टर बड़धवाल ने भी यही बात कही थी।

इस संग्रह के प्रकाशित होने के पूर्व नाथ सिद्धों की बानियों के कुछ और संग्रहग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन और डाक्टर धर्मवीर भारती ने भी इस दिशा में काम किया है। डाक्टर कल्याणी मल्लिक ने 'सिद्ध सिद्धान्त पद्धति ऐन्ड अदर वर्क्स आव नाथ योगीज' का संपादन कर उसे पूने से १९५४ ई० में प्रकाशित कराया है। इसमें नाथ सिद्धों की विभिन्न संस्कृत रचनाओं के अतिरिक्त आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की भी कुछ रचनाओं का प्रकाशन किया गया है। जैसे—गोरक्ष उपनिषद्, मत्स्येंद्रनाथजी का पद, भरथरीजी की सबदी, जालन्धरीपादजी की सबदी। यह संपादन कार्य विभिन्न हस्तलिखित पोथियों के आधार पर किया गया है।

प्रस्तुत संग्रह में अपेक्षाकृत अधिक नाथ सिद्धों की रचनाएं संपादित हैं। इनके रचयिता नाथ सिद्धों की कुल संख्या २४ है। इस संग्रह की गोपीचंदजी की सवदी, जलंध्रीपावजी की सवदी, चरपटीजी की सवदी तथा मच्छन्द्रनाथजी का पद इन रचनाओं के पाठ भेदादि के लिये डाक्टर मल्लिक के ग्रंथ का सदुपयोग किया जा सकता है। इन रचनाओं की भाषा के संबंध में डाक्टर मल्लिक का मत है कि यह अंशतः राजस्थानी तथा अंशतः हिन्दुस्तानी है। इसके अतिरिक्त श्री योग प्रचारिणी सभा गोरक्ष टिह्ला, वाराणसी से प्रकाशित श्री नाथ शतकम् पुस्तिका में चन्द्रनाथ तथा गरीबनाथ जी की सवदियाँ प्रकाशित हुई हैं। परंतु प्रस्तुत ग्रंथ में चन्द्रनाथ की कोई सवदी नहीं है। इसमें संपादित गरीबनाथजी की सवदी शतक में प्रकाशित उनकी सवदी से अंशतः भिन्न है और पाठभेद भी है।

इन सब रचनाओं के प्रकाशित होने के पूर्व नाथ सिद्धों के दर्शन साधना तथा काव्यरूप के अध्ययन का एक मात्र आधार गोरखबानी (जोगेसुरी बानी) ही था। अब इन रचनाओं के प्रकाशन से रचयिता नाथसिद्धों की संख्या के साथ ही रचनाओं की भी वृद्धि हुई है परंतु प्राप्त रचनाओं की वृद्धि के साथ ही उनकी प्रामाणिकता में कोई वृद्धि नहीं हुई है। प्राप्त सामग्री के आधार पर पूर्ण विश्वास के साथ यह नहीं कहा जा सकता कि ये रचनाएँ उन्हीं सिद्धों की हैं जिनके नाम से वे प्रचलित और प्रचारित हैं।

जिन नाथ सिद्धों की बानियाँ इस संग्रह में संपादित हैं उनमें गोरक्ष, मत्स्येन्द्र, चौरंगीनाथ, चर्पट, काणोरी, जालंधरि, गोपीचन्द और भरथरी ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। इन लोगों का समय नवीं ई० शताब्दी से १२ ई० शताब्दी तक विस्तृत है। इनमें सर्वाधिक महिमामंडित व्यक्तित्व गोरखनाथ का है। अब यह प्रायः निर्विवाद है कि बौद्ध सिद्धों और नाथ सिद्धों दोनों में समान रूप से समाहत मत्स्येन्द्र गोरख के गुरु थे। अभिनवगुप्तपाद ने मच्छन्द्र विभु का स्तवन किया है। यह स्तवन भी तांत्रिक शैव ग्रन्थ तन्त्रालोक में किया गया है। अतः इससे दो तथ्य हाथ लगते हैं। पहला यह कि मत्स्येन्द्र परम माहेश्वराचार्य अभिनवगुप्तपाद के पूर्ववर्ती थे और दूसरा यह कि वे तांत्रिक शैव सिद्ध थे।

इस बात पर भी ध्यान रखना आवश्यक है कि भारत के विभिन्न स्थानों में अपने अस्तित्व तथा प्रभावविस्तार के लिये सम्प्रदायों में अत्यधिक तीव्र संघर्ष था। कहीं इन शैवों ने वैष्णवों के कंधों से कंधा भिड़ाकर बौद्धों और जैनों का विरोध किया और कहीं तान्त्रिकों से सहयोग कर विरोधियों से लोहा लिया। उसी संघर्ष काल में अभिनव गुप्त का अभ्युदय हुआ था। प्रस्तुत ग्रंथ की भूमिका में नाथ सिद्धों का प्रारंभिक आविर्भाव काल नवीं ई० शताब्दी माना गया है। नाथ सिद्धों, नव नाथों और चौरासी सिद्धों की विभिन्न सूधियों तथा काल निर्णय के स्रोतों पर विचार करने पर इस निष्कर्ष तक पहुँचा जा सकता है कि इन नाथ सिद्धों का आविर्भाव तथा विचारकाल नवीं ई० शताब्दी से लेकर बारहवीं ई० शताब्दी तक था। साधनात्मक तथा दार्शनिक ग्रन्थों के अध्ययन से प्रतीत होता है कि इन दोनों प्रकार के सिद्धों में तान्त्रिक धारा जीवित थी।

राजनीतिक परिवर्तन तथा सामाजिक उथल पुथल से इन सम्प्रदायों में उप सम्प्रदाय जन्म लेते रहे। ये एक दूसरे में अंतर्भुक्त भी होते रहे। इन सम्प्रदायों के परस्पर मिश्रण की कथा अत्यधिक उलझी हुई है। लोकश्रुति और ऐतिहासिक श्रुति दोनों में भारी अंतर है। हमें केवल ऐतिहासिक श्रुति पर विश्वास करना चाहिए। लोकश्रुति की अपेक्षा ऐतिहासिक श्रुति भले ही कम सूचना दे फिर भी वह अधिक उपयोगी है।

आचार्य हजारीप्रसादजी द्विवेदी साहित्य की इस शाखा के प्रसिद्ध अधिकारी विद्वानों में गिने जाते हैं। अतः उनके द्वारा संपादित प्रस्तुत ग्रंथ सभी दृष्टियों से उपादेय होना ही चाहिए। मैं आचार्य द्विवेदीजी का कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने स्वयं ही ग्रंथ की भूमिका में सभी ज्ञातव्य बातें दे दी हैं और इस प्रकार मुझे अधिक पिष्टपेषण से बचा दिया है। वस्तुतः प्रस्तुत ग्रन्थ पर लेखनी चलाना ही मेरी अनधिकार चेष्टा है क्योंकि इसका मुद्रण उसी समय हो चुका था जिस समय आचार्य हजारीप्रसाद जी ही प्रस्तुत ग्रन्थमाला के प्रधान सम्पादक थे परन्तु इसका प्रकाशन अब हो रहा है। इसलिए विवशतः हाथ में आटा लगाकर मैं भंडारी बन रहा हूँ। निष्ठापूर्ण सहायता के लिये मैं अपने सहायक श्री कल्पनाथ सिंह का भी कृतज्ञ हूँ। हमें आशा है कि आचार्य

(६)

जी के इस कार्य से प्रेरणा पाकर सिद्ध साहित्य में शोधकार्य अपसर करने की ओर अन्य विद्वान् भी उन्मुख होंगे और प्रस्तुत ग्रंथ से अज्ञान का काम लेते हुए जीर्ण पृष्ठ-भूमि में छिपे रत्नों का पता लगा कर गोस्वामीजी का यह दोहा सार्थक करेंगे कि—

यथा सु अंजन अञ्जि दृग साधक सिद्ध सुजान ।
कौतुक देखत फिरहिं वन भूतल भूरि निधान ॥

—रुद्र काशिकेय

प्रधान संपादक

विड़ला ग्रंथमाला

— — —

1997, 2000, 2003, 2006, 2009, 2012, 2015, 2018, 2021

2000, 2003, 2006, 2009, 2012, 2015, 2018, 2021

भूमिका

नाथ सिद्धों की हिंदी बानियों का यह संग्रह कई हस्तलिखित प्रतियों से संकलित हुआ है। इसमें गोरखनाथ की बानियाँ संकलित नहीं हुईं क्योंकि स्वर्गीय डा० पीतांबर दत्त वड़धवाल गोरखनाथ की बानियों का संपादन पहले से ही कर दिया है और वह 'गोरख बानी' नाम से प्रकाशित भी हो चुकी हैं (हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग)। वड़धवाल जी ने अपनी भूमिका में बताया था कि उन्होंने अन्य नाथसिद्धों की बानियों का संग्रह भी कर लिया है जो इस पुस्तक के दूसरे भाग में प्रकाशित होगा। दूसरा भाग अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ और अत्यंत दुःख की बात है कि उसके प्रकाशित होने के पूर्व ही विद्वान् संपादक ने इहलोक त्याग दिया। डा० वड़धवाल का खोज से निम्नलिखित ४० पुस्तकों का पता चला था जिन्हें गोरखनाथ-रचित बताया जाता है। डा० वड़धवाल ने बहुत छान-बीन के बाद इनमें प्रथम १४ ग्रंथों को निसंदिग्ध रूप से प्राचीन माना क्योंकि इनका उल्लेख प्रायः सभी प्रतियों में मिला। तेरहवीं पुस्तक ग्यान चौंतीसा समय पर न मिल सकने के कारण उनके द्वारा संपादित संग्रह में नहीं आ सका परंतु बाकी तेरह को गोरखनाथ की बानी समझकर उस संग्रह में उन्होंने प्रकाशित कर दिया है। पुस्तकें ये हैं—

१ सवदी	१२ ग्यान तिलक
२ पद	१३ ज्ञान चौंतीसा
३ शिष्यादर्शन	१४ पंचमात्रा
४ प्राण संकली	१५ गोरखगणेश गोष्ठी
५ नरवै बोध	१६ गोरखदत्त गोष्ठी (ग्यान दीपबोध)
६ आत्मबोध	१७ महादेव गोरखगुष्टि
७ श्रमय मात्रा जोग	१८ शिष्ट पुराण
८ पंद्रह तिथि	१९ दया बोध
९ सप्तवार	२० जाति भौरावली (छंद गोरख)
१० मंछिंद्र गोरख बोध	२१ नवग्रह
११ रोमावली	२२ नवरात्र

२३ अष्टपारश्या	३२ खाणीवाणी
२४ रह रास	३३ गोरखसत
२५ ग्यान माला	३४ अष्टमुद्रा
२६ आत्मबोध (२)	३५ चौबीस सिध
२७ व्रत	३६ पडक्षरी
२८ निरंजन पुराण	३७ पंच अग्नि
२९ गोरख वचन	३८ अष्ट चक्र
३० इंद्री देवता	३९ अचलि सिद्धक
३१ मूलगर्भावली	४० काफिर बोध

गोरखनाथ की प्रामाणिक समझी जानेवाली वानियों के प्रकाशित हो जाने के कारण इस संग्रहमें उन्हें नहीं लिया गया। अन्य सिद्धों की जो वानियाँ उपलब्ध हुईं उन्हें प्रकाशित किया जा रहा है।

इस संग्रह की अधिकांश वानियाँ नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय में सुरक्षित तीन हस्तलिखित पुस्तकों से संग्रह की गई हैं। इसके पदकर्ताओं का विवरण इस प्रकार है:—

‘क’ प्रति अर्थात् नागरी प्रचारिणी सभा काशी के आर्यभाषा पुस्तकालय में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक सं० १४०९ से संगृहीत सिद्धों की सूची। (इस प्रति का लिपिकाल सं० १७७१ वि० है।)—

सिद्ध नाम	पद संख्या
१ गोरख नाथ	१५६
२ चरपट जी	५५
३ भरथरी	३२
४ गोपीचंद्र	१८
५ जलंध्री पाव	९
६ हाली पाव	५
७ मीडकीपाव	७
८ काणेरी पाव	६
९ जती हणवंत	८९
१० नागाश्ररजन जी	३
११ महादेव जी	१०
१३ पारवती जी	६

‘ख’ प्रति अर्थात् नागरीप्रचारिणी सभा, काशी के आर्यभाषा पुस्तकालय में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक सं० १४०८ से संगृहीत ‘सिद्धों’ की सूची (इस प्रति का लिपिकाल सं० १८३६ वि० है ।)—

सिद्ध नाम	पद संख्या
१ मछेन्द्र जी का पद	१
२ गोरख नाथ	१८३
३ चरपट नाथ	५८
४ भरथरी	३७
५ हणवंत	१
६ बाल गुन्दाई	२
७ सिधगरीब जी	६
८ देवल जी	५
९ दत्त जी	१७
१० गोपीचन्द जी	३५
११ जलंग्री पाव	६
१२ बालनाथ	६
१३ धूँधलीमल	१४
१४ चौरंगीनाथ	४
१५ सिध घोड़ा चोली	१५
१६ सिध हरताली	६
१७ हालीपाव	७
१८ भीडकी पाव	७
१९ चुणकर नाथ	४
२० अजैवाल	१०
२१ पारवती जी	६
२२ महादेवजी	१५
२३ हणवंत जी	६
२४ सती काणेरी	६
२५ पृथ्वीनाथ	११८

‘ग’ प्रति अर्थात् नागरी प्रचारिणी सभा काशी के आर्यभाषा पुस्तकालय में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक नं० ८७३ से संगृहीत सिद्धों की और उनकी रचनाओं की सूची (इस प्रति का लिपिकाल १८५५-५६ वि० है ।)—

सिद्ध नाम

- १ ग्रंथ गोरख बोध
- २ दत्तात्रे गोरख संवाद
- ३ गोरख गणेश गुष्टि
- ४ ग्रंथ ग्यान लिलफ
- ५ ग्रंथ श्रमैमातरा
- ६ ग्रंथ बतीस लछन
- ७ ग्रंथ सिष्टि पुराण
- ८ चौबीस सिध्या
- ९ आत्मां बोध ग्रंथ
- १० ग्रंथ षडालिरी
- ११ रह्रासि ग्रंथ (दयाबोध)
- १२ ग्रंथ गिनांन माला
- १३ ग्रंथ रोमावली पंचभासरा
- १४ ग्रंथ पंच अग्नि, तिथजोग ग्रंथ
- १५ ग्रंथ सत बार, सप्तवार नौग्रह
- १६ ग्रंथ आत्मबोध
- १७ ग्रंथ सिध्या दरसण
- १८ ग्रंथ अष्ट मुद्रा
- १९ ग्रंथ अष्टचक्र
- २० ग्रंथ राम बोध
- २१ भरथरी जी की सबदी
- २२ गोपीचन्द जी की सबदी
- २३ चिरपट जी की सबदी
- २४ जलंधरी पाव जी की सबदी
- २५ पृथ्वीनाथ जी की सबदी
- २६ चौरंगी नाथ जी की सबदी
- २७ काशीरी पाव जी की सबदी
- २८ हालीपाव जी की सबदी
- २९ भीडकी पाव जी की सबदी
- ३० हणवंतजी की सबदी
- ३१ नागाअरजन जी की सबदी

- ३२ सिध हरताली जी की सबदी
 ३३ सिद्ध गरीब
 ३४ धूंधली मल
 ३५ रामचन्द्र जी
 ३६ बाल गुंदाईजी
 ३७ घोड़ाचोली
 ३८ अजैपाल
 ३९ चौणक नाथ
 ४० देवलनाथ
 ४१ महादेवजी
 ४२ पारवती बां
 ४३ सिध मालीपाव
 ४४ सुफल हंसजी
 ४५ दत्तात्रेजी

इन तीन प्रतियों में पाई जानेवाली रचनाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य स्रोतों से प्राप्त रचनाएं भी प्रस्तुत संग्रह में संकलित हुई हैं। सबसे मनोरंजक और महत्वपूर्ण रचना चौरंगी नाथ की प्राण-संकली है जो पिंडी के जैन भाण्डार में सुरक्षित एक प्रति से ली गई है। कुछ रचनाएं काद्री मठाधीश श्री श्री चमेली नाथ जी महाराज की कृपा से प्राप्त हुई हैं। कई अन्य मित्रों ने भी कुछ रचनाएं भेजी हैं। जोधपुर के डा० सोमनाथ जी ने वहाँ की दरबार लाइब्रेरी से मत्स्येन्द्र नाथ जी कुछ रचनाएं उद्धृत करके भेजी हैं। मित्रों की भेजी हुई कई रचनाओं को मैंने संग्रह में स्थान देने योग्य नहीं समझा क्यों कि वैसे तो इस संग्रह की अनेक रचनाओं की प्रामाणिकता सन्दिग्ध है परंतु मैंने जिन रचनाओं को छोड़ दिया है उनकी अप्रामाणिकता सन्देह से परे है। इस प्रकार अनेक मित्रों की कृपा से यह संग्रह प्रस्तुत किया जा सका है।

गोरखनाथ का समय

मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ के समय के बारे में इस देश में अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार की बातें कही हैं। वस्तुतः इनके और इनके सम-सामयिक सिद्ध जालंधर नाथ और कृष्णपाद के संबंध में इस देश में अनेक दंतकथाएँ प्रचलित हैं। मैंने कुछ का संग्रह 'नाथ-संप्रदाय' नामक अग्रणी

पुस्तक में किया है (हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद से सन् १९५० में प्रकाशित) । उन कथाओं को फिर से यहाँ दुहराना अनावश्यक है पर उनके अध्ययन से और अन्य प्रामाणिक वृत्तों के आधार पर मैं जिस निष्कर्ष पर पहुँचा उसे यहाँ दे देना आवश्यक है । गोरक्षनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ-विषयक समस्त कहानियों के अनुशीलन से कई बातें स्पष्ट रूप से जानी जा सकती हैं । प्रथम यह कि मत्स्येन्द्रनाथ और जालंधरनाथ समसामयिक थे; दूसरी यह कि मत्स्येन्द्रनाथ गोरक्षनाथ के गुरु थे और जालंधरनाथ कानुपा या कृष्णपाद के गुरु थे; तीसरी यह कि मत्स्येन्द्रनाथ कभी योग-मार्ग के प्रवर्तक थे फिर संयोग वश एक ऐसे आचार में सम्मिलित हो गए थे जिसमें स्त्रियों के साथ अवाध संसर्ग मुख्य बात थी—संभवतः यह वामाचारी साधना थी;—चौथी यह कि शुरू से ही जालंधरनाथ और कानिया की साधना-पद्धति मत्स्येन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ की साधना-पद्धति से भिन्न थी । यह स्पष्ट है कि किसी एक का समय भी मालूम हो तो बाकी कई सिद्धों के समय का पता आसानी से लग जायगा । समय मालूम करने के लिये कई युक्तियाँ दी जा सकती हैं । एक एक करके हम उन पर विचार करें ।

(१) सबसे प्रथम तो मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा लिखित कौल ज्ञान निर्णय ग्रंथ (कलकत्ता संस्कृत सीरीज़ में डा० प्रबोधचंद्र वागची द्वारा १९३४ ई० में संवादित) का लिखिकाल निश्चित रूप से सिद्ध कर देता है कि मत्स्येन्द्रनाथ ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती हैं ।

(२) सुप्रसिद्ध काश्मीरी आचार्य अभिनव गुप्त ने अपने तंत्रालोक में मञ्जुंद विभु को नमस्कार किया है । ये 'मञ्जुंद विभु' मत्स्येन्द्रनाथ ही हैं, यह भी निश्चित है । अभिनव गुप्त का समय निश्चित रूप से ज्ञात है । उन्होंने ईश्वरप्रत्यभिज्ञा की वृहती वृत्ति सन् १०१५ ई० में लिखी थी और क्रमस्तोत्र की रचना सन् ९९१ ई० में की थी । इस प्रकार अभिनवगुप्त सन् ईसवी की दसवीं शताब्दी के अन्त में और ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में वर्तमान थे । मत्स्येन्द्रनाथ इससे पूर्व ही आविर्भूत हुए होंगे । जिस आदर और गौरव के साथ आचार्य अभिनवगुप्तवाद ने उनका स्मरण किया है उससे अनुमान किया जा सकता है कि उनके पर्याप्त पूर्ववर्ती होंगे ।

(३) पंडित राहुल सांकृत्यायन ने गंगाकेपुरातत्वांक में ८४ वज्रयानी सिद्धों की सूची प्रकाशित कराई है । इसके देखने से मालूम होता है

कि मीनवा नामक सिद्ध जिन्हें तिब्बती परंपरा में मत्स्येंद्रनाथ का पिता कहा गया है, पर जो वस्तुतः मत्स्येंद्रनाथ से अभिन्न है, राजा देवपाल के राज्य-काल में हुए थे। राजा देवपाल ८०६-४६ ई० तक राज्य करते रहे (चतु राशी तिसिद्धप्रवृत्ति, तन्जूर ८६।१। कार्डियर पृ० २४७) इससे यह सिद्ध होता है कि मत्स्येंद्रनाथ नवीं शताब्दी के मध्य भाग में और अधिक से अधिक अन्त्य भाग तक वर्तमान थे।

(४) गोविंदचंद्र या गोपीचंद्र का संबंध जालंधरपाद से बताया जाता है। वे कानफा के शिष्य होने से जालंधरपाद की तीसरी पुस्त में पढ़ते हैं। इधर तिरुमलय की शैलिलिपि से यह तथ्य उद्धार किया जा सका है कि दक्षिण के राजा राजेंद्रचोल ने मणिकचंद्र के पुत्र गोविंदचंद्र को पराजित किया था। बंगला में गोविंदचंद्र के गान नाम से जो पांथी उपलब्ध हुई है, उसके अनुसार भी गोविंदचंद्र का किसी दक्षिणाय राजा का युद्ध वर्णित है। राजेंद्र चोल का समय १०६३ ई०-१११२ ई० है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि गोविंदचंद्र ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य भाग में वर्तमान थे। यदि जालंधरपाद उनसे सौ वर्ष पूर्ववर्ती हों तो भी उनका समय दसवीं शताब्दी के मध्य भाग में निश्चित होता है। मत्स्येंद्रनाथ का समय और भी पहले निश्चित हो चुका है। जालंधरपाद उनके समसामयिक थे इस प्रकार अनेक कष्ट-कल्पना के बाद भी इस बात से पूर्ववर्ती प्रमाणों की अच्छी संगति नहीं बैठती।

(५) वज्रयानो सिद्ध कण्हवा (कानिगा, कानिफा, कान्हूरा) ने स्वयं अपने गानों में जालंधरपाद का नाम लिया है। तिब्बती परंपरा के अनुसार ये भी राजा देवपाल (८०६-८४६ ई०) के समकालीन थे। इस प्रकार जालंधरपाद का समय इनसे कुछ पूर्व ठहरता है।

(६) कन्धड़ी नामक एक सिद्ध के साथ गोरक्षनाथ का संबंध बताया जाता है। प्रबंधचिन्तामणि में एक कथा आती है कि चौलुक्य राजा मूलराज ने एक मूलेश्वर नाम का शिवमंदिर बनवाया था। सोमनाथ ने राजा के नित्य नियत वंदन-पूजन से सन्तुष्ट होकर अणहिल्लपुर में श्रवतीर्ण होने की इच्छा प्रकट की। फलस्वरूप राजा ने वहाँ त्रिपुष्प-प्रासाद नामक मंदिर बनवाया। उसका प्रबंधक होने के लिये राजा ने कंधड़ी नामक शैव-सिद्ध से प्रार्थना की। जिस समय राजा उस सिद्ध से मिलने गया उस समय

सिद्ध को बुखार था, पर अपने बुखार को उसने कथा में संक्रमित कर दिया। कथा कांपने लगी। राजा ने कारण पूछा तो उसने बताया कि उसीने कथा में ज्वर संक्रमित कर दिया है। बड़े छुल-बल से उस निःस्पृह तपस्वी को राजा ने मंदिर का प्रबंधक बनवाया। कहानी के सिद्ध के सभी लक्षण नाथपंथी योगी के हैं। इसलिये यह कथड़ी निश्चय ही गोरखनाथ के शिष्य ही होंगे। प्रबंधक चिन्तामणि की सभी प्रतियों में लिखा है कि मूलराज ने संवत् ६६३ की आषाढी पूर्णिमा को राज्यभार ग्रहण किया था। केवल एक प्रति में ६६८ संवत् है। इस हिसाब से जो काल अनुमान किया जा सकता है, वह पूर्ववर्ती प्रमाणों से निर्धारित तिथि के अनुकूल ही है। ये ही गोरक्षनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ का काल निर्णय करने के ऐतिहासिक या अर्द्ध-ऐतिहासिक आधार हैं। परन्तु प्रायः दन्तकथाओं और साम्प्रदायिक परंपराओं के आधार पर भी काल-निर्णय का प्रयत्न किया जाता है। इन दन्तकथाओं से सम्बद्ध ऐतिहासिक व्यक्तियों का काल बहुत समय जाना हुआ रहता है। बहुत से ऐतिहासिक व्यक्ति गोरक्षनाथ के साक्षात् शिष्य माने जाते हैं। उनके समय की सहायता से भी गोरक्षनाथ के समय का अनुमान किया जा सकता है। त्रिगुप्त ने (“गोरक्षनाथ एण्ड कनफटा योगीज़”, कलकत्ता, १६३८) इन दन्तकथाओं पर आधारित काल को चार मोटे विभागों में इस प्रकार बांट लिया है:—

(१) कबीर, नानक आदि के साथ गोरक्षनाथ का संवाद हुआ था, इस पर दन्तकथाएं भी हैं और पुस्तकें भी लिखी गई हैं। यदि इनपर से गोरक्षनाथ का कालनिर्णय किया जाय, जैसा कि बहुत-से पंडितों ने किया भी है, तो चौदहवीं शताब्दी के ईपत् पूर्व या मध्य में होगा। (२) गूगा की कहानी, पश्चिमी नाथों की अनुश्रुतियां, बंगाल की शैवपरम्परा और धर्मपूजा का संप्रदाय, दक्षिण के पुरातत्व के प्रमाण, ज्ञानेश्वर की परंपरा आदि को प्रमाण माना जाय तो यह काल १२०० ई० के उधर ही जाता है। तेरहवीं शताब्दी में गोरखपुर का मठ ढहा दिया गया था, इसका ऐतिहासिक सबूत है। इसलिए निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि गोरखनाथ १२०० ई० के पहले हुए थे। इसकाल के कम-से-कम एक सौ वर्ष पहले तो यह काल होना ही चाहिए। (३) नेपाल के शैव-बौद्ध परंपरा के नरेन्द्रदेव, उदयपुर के बाप्याराव, उत्तर पश्चिम के रसाढ़ और होदो, नेपाल के पूर्व में शंकराचार्य से भेंट आदि पर आधारित काल ८ वीं शताब्दी से लेकर नवीं

शताब्दी तक के काल का निर्देश करते हैं। (४) कुछ परंपराएं इससे भी पूर्ववर्ती तिथि की ओर संकेत करती हैं। त्रिंशद दूसरी श्रेणी के प्रमाणों पर आधारित काल को उचित काल समझते हैं, पर साथ ही यह स्वीकार करते हैं कि यह अन्तिम निर्णय नहीं है। जब तक और कोई प्रमाण नहीं मिल जाता तब तक वे गोरक्षनाथ के विषय में इतना ही कह सकते हैं कि गोरक्षनाथ १२०० ई० से पूर्व, संभवतः ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में, पूर्वी बंगाल में प्रादुर्भूत हुए थे। परन्तु सब मिलाकर वे निश्चित रूप से जोर देकर कुछ नहीं कहते और जो काल बताते हैं उसे क्यों अन्य प्रमाणों से अधिक युक्तिसंगत माना जाय, यह भी नहीं बताते। मैंने नाथ संप्रदाय में दिखाया है कि किस प्रकार गोरक्षनाथ के अनेक पूर्ववर्ती मत उनके द्वारा प्रवर्तित बारहपंथी संप्रदाय में अन्तर्भुक्त हो गए थे। इन संप्रदायों के साथ उनकी अनेक अनुश्रुतियां और दन्तकथाएं भी संप्रदाय में प्रविष्ट हुईं। इसीलिये अनुश्रुतियों के आधार पर ही विचार करनेवाले विद्वानों को कई प्रकार की परस्पर विरोधी परंपराओं से टकराना पड़ता है।

परन्तु ऊपर के प्रमाणों के आधार पर नाथमार्ग के आदि प्रवर्तकों का समय नवीं शताब्दी का मध्य-भाग ही उचित जान पड़ता है। इस मार्ग में इसके पूर्ववर्ती सिद्ध भी बाद में चलकर अन्तर्भुक्त हुए हैं और इसलिये गोरक्षनाथ के संबंध में ऐसी दर्जनों दन्तकथाएं चल पड़ी हैं, जिनको ऐतिहासिक तथ्य मान लेने पर तिथि-संबंधी भ्रमेला खड़ा हो जाता है। हमने नाथ-संप्रदाय में इन दन्तकथाओं की चर्चा की है।

गोरक्षनाथ के पूर्व ऐसे बहुत-से शैव, बौद्ध और शाक्त-संप्रदाय थे जो वेदवाह्य होने के कारण न हिंदू थे न मुसलमान। जब मुसलमानी धर्म प्रथम बार इस देश में परिचित हुआ तो नाना कारणों से देश दो प्रतिद्वंद्वी, धर्मसाधना-मूलक दलों में विभक्त हो गया। जो शैव मार्ग और शाक्त मार्ग वेदानुयायी थे, वे बृहत्तर ब्राह्मणप्रधान हिंदू समाज में मिल गए और निरंतर अपनेको कष्टर वेदानुयायी सिद्ध करने का प्रयत्न करते रहे। वह प्रयत्न आज भी जारी है। उत्तर भारत में ऐसे अनेक संप्रदाय थे जो वेदवाह्य होकर भी वेदसंमत योग-साधना या पौराणिक देव-देवियों की उपासना किया करते थे। वे अपने को शैव, शाक्त और योगी कहते रहे। गोरक्षनाथ ने उनको दो प्रधान दलों का पाया होगा—(१) एक तो वे जो योगमार्ग के अनुयायी थे, परंतु शैव या शाक्त नहीं थे, दूसरे (२) वे जो शिव या शक्ति

के उपासक थे—शैवागमों के अनुयायी थे—परंतु गोरक्षसंमत योग मार्ग के उतने नजदीक नहीं थे। इनमें से जो लोग गोरक्षसंमत मार्ग के नजदीक थे उन्हें उन्होंने योगमार्ग में स्वीकार कर लिया, बाकी को अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार दोनों ही प्रकार के मार्गों से ऐसे बहुत से संप्रदाय आ गए जो गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती थे परन्तु बाद में उन्हें गोरक्षनाथी माना जाने लगा। धीरे-धीरे जब परंपराएं लुप्त हो गईं तो उन पुराने संप्रदायों के मूल प्रवर्तकों को भी गोरक्षनाथ का शिष्य समझा जाने लगा। इस अनुमान को स्वीकार कर लेने पर वह व्यर्थ का वाद-समूह स्वयमेव परास्त हो जाता है जो गोरक्षनाथ के कालनिर्णय के प्रसंग में पंडितों ने रचा है। इन तथाकथित शिष्यों के काल के अनुसार वे कभी आठवीं शताब्दी के सिद्ध होते हैं, कभी दसवीं, कभी ग्यारहवीं, और कभी कभी तो पहली दूसरी शताब्दी के भी।

संप्रदाय-भेद

गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित योगि-संप्रदाय नाना पंथों में विभक्त हो गया है। पंथों के अलग होने का कोई-न-कोई भेदक कारण हुआ करता है। हमारे पास जो साहित्य है उसपर से यह समझना बड़ा कठिन है कि किन कारणों से और किन साधनाविषयक या तत्ववाद-विषयक मतभेदों के कारण ये संप्रदाय उत्पन्न हुए। इस सांप्रदायिक संघटन की इस समय जो व्यवस्था उपलब्ध है उससे ऐसा माहूम होता है कि भिन्न-भिन्न संप्रदाय उनके थोड़े ही समय बाद और कुछ तो उनके जीवनकाल में ही उत्पन्न हो गए। भर्तृहरि उनके शिष्य बताए जाते हैं, कानिया उनके समकालीन थे, पूरनभगत या चौरंगीनाथ भी उनके गुरुभाई और समकालीन बताए जाते हैं, गोपीचंद्र उनके समसामयिक सिद्ध जालंधर नाथ के शिष्य थे। इन सबके नाम से संप्रदाय चला है। जालंधर नाथ उनके गुरु के सतीर्थ थे, उनका प्रवर्तित संप्रदाय भी गोरक्षनाथ के संप्रदाय के अंतर्गत माना जाता है। इस प्रकार गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती समसायिक और ईषत्परवर्ती जितने सिद्ध हुए उन सबके प्रवर्तित संप्रदाय गोरक्षपंथ में शामिल हैं। वर्तमान नाथपंथ में जितने संप्रदाय हैं वे मुख्य रूप से उन बारह पंथों से संबद्ध हैं जिनमें आधे शिव के द्वारा प्रवर्तित कहे जाते हैं और आधे गोरक्षनाथ द्वारा। इनके अतिरिक्त और भी बारह (या अठारह) संप्रदाय थे जिन्हें गोरक्षनाथ ने नष्ट कर दिया। उन नष्ट किए जानेवालों में कुछ शिव जी के संप्रदाय थे और कुछ

स्वयं गोरक्षनाथ जी के। अर्थात् गोरक्षनाथ की जीवितावस्था में ही ऐसे बहुत-से संप्रदाय थे जो अपनेको उनका अनुवर्ती मानते थे और उन अनधिकारी संप्रदायों का दावा इतना भ्रामक हो गया कि स्वयं गोरक्षनाथ ने ही उनमें से वारह या अष्टारह को तोड़ दिया। क्या यह संभव है कि कोई महान् गुरु अपने जीवित काल में ही अपने मार्ग को भिन्न-भिन्न उपशाखाओं में विभक्त देखे और उनके मतभेदों को तो दूर न करे बल्कि उनकी विभिन्नता को स्वीकार कर ले ? इस प्रकार की अनुश्रुति की कोई ऐतिहासिक व्याख्या क्या संभव है ?

योगियों के इस विश्वास से मिलता जुलता एक विश्वास सूफ़ी साधकों में भी प्रचलित है। अबुल हसन नूरी ने कशफुल महजूब (लाहौर, १६२३) में लिखा है कि सूफ़ियों के वारह संप्रदाय थे जिनमें से दो को स्वयं परमात्मा ने तोड़ दिया और सिर्फ दस संप्रदायों को मान्यता दी। इस वक्तव्य से यह अनुमान किया जा सकता है कि नाथ-योगियों का विश्वास काफी पुराना है और उससे दूसरी साधना के लोग भी प्रभावित हुए हैं।

गोरक्षनाथ का जिस समय आयिर्भाव हुआ था वह काल भारतीय धर्म-साधना में बड़े उथल-पुथल का है। एक ओर मुसलमान लोग भारत में प्रवेश कर रहे थे और दूसरी ओर बौद्धसाधना क्रमशः मंत्र-तंत्र और टोने-टोटके की ओर अग्रसर हो रही थी। दसवीं शताब्दी में यद्यपि ब्राह्मण धर्म संपूर्ण रूप से अपना प्राधान्य स्थापित कर चुका था तथापि बौद्धों, शाक्तों और शैवों का एक बड़ा भारी समुदाय ऐसा था जो ब्राह्मण और वेद के प्राधान्य का नहीं मानता था। यद्यपि उनके परवर्ती अनुयायियों ने बहुत कोशिश की है कि उनके मार्ग को श्रुतिसम्मत मान लिया जाय परंतु यह सत्य है कि ऐसे अनेक शैव और शाक्त संप्रदाय उन दिनों वर्तमान थे जो वेदाचार को अत्यंत निम्न कोटि का आचार मानते थे और ब्राह्मण-प्राधान्य एकदम नहीं स्वीकार करते थे।

संक्षेप में देखा जाय कि किस प्रकार मुख्य पंथों का संबंध शिव और गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित पुराने संप्रदायों के साथ स्थापित किया जाता है। नीचे का व्यौरा उसी संबंध को बताने के लिये दिया जा रहा है। इसे तैयार करने में मुख्य रूप से त्रिगस की पुस्तक 'गोरक्षनाथ ऐंड फनकटा

योगीज' का सहारा लिया गया है । परंतु अन्य मूलों से प्राप्त जानकारियों को भी स्थान दिया गया है ।

(१) शिव के द्वारा प्रवर्तित प्रथम संप्रदाय भुज के कण्ठर नाथी लोगों का है । कण्ठर नाथ के साथ अन्य किसी शाखा का संबंध नहीं खोजा जा सका है ।

(२) और (३) शिव द्वारा प्रवर्तित पागलनाथ और रावल संप्रदाय परस्पर बहुत मिश्रित हो गए हैं । ध्यान देने की बात है कि गोरखपुर में सुनी हुई परंपरा के अनुसार पागलनाथी संप्रदाय के प्रवर्तक पूरनभगत या चौरंगीनाथ हैं । ये राजा रसाळ के वैमात्रेय भाई माने जाते हैं । ज्वालामुखी के माननाथ राजा रसाळ के अनुयायी बताए जाते हैं, इसलिये कभी कभी माननाथ और उनके अनुवर्ती अर्जुन नागा या अरजनगंगा को भी पागलपंथी मान लिया जाता है, वस्तुतः अरजनगंगा नागाजुन का नामान्तर है । फिर अफगानिस्तान के रावल—जो मुसलमान योगी हैं—दो संप्रदायों को अपने मत का मानते हैं—(१) मादिया और (२) गल । गल को ही पागलपंथी कहते हैं । इस प्रकार इन दोनों शाखाओं से पागलपंथ का संवध स्थापित होता है । इन लोगों को रावल गल्ला भी कहते हैं । इनका मुख्य स्थान रावलपिंडी में है—जो एक परंपरा के अनुसार पूरनभगत और राजा रसाळ के प्रतापी तिता गज की पुरानी राजधानी थी । गजनी के पुराने शासक भी ये ही थे और गजनी नाम भी इनके नाम पर ही पड़ा था । गजनी का पुराना हिंदू नाम 'गजवनी' (?) था । बाद में गज ने स्यालकोट को अपनी राजधानी बनाया था । रावलों का स्थान पेशावर, रोहतक और सुदूर अफगानिस्तान तक में है ।

(४) पंख या पंक से निम्नलिखित संप्रदाय संबद्ध माने जा सकते हैं—

१—सतनाथ या सत्यनाथी जिनकी प्रधान गद्दी पुरी में और जिनके अन्य स्थान मेवा थानेश्वर और करनाल में हैं । ये ब्रह्मा के अनुवर्ती कहे जाते हैं ।

२—धर्मनाथ—जो कोई राजा थे और बाद में योगी हो गये थे ।

३—गरीबनाथ जो धर्मनाथ के साथ ही कच्छ गए थे ।

४—हाड़ीभरंग (?)

(५) शिव के पाँचवे संप्रदाय मारवाड़ के 'वन' से किसी शाखा का कोई संबंध नहीं मालूम हो सका ।

(६) गोपाल या राम के ।

१—संतोपनाथ—ये ही संभवतः इसके मूल प्रवर्तक हों । कौलावली-निर्णय और श्यामारहस्य के मानव गुरुओं में मत्स्येन्द्रनाथ, गोरक्ष-नाथ आदि के साथ इनका भी नाम है ।

२—जोधपुर के दास; इनके गोपालनाथियों का संबंध बताया जाता है ।

(७) चाँदनाथ कपिलानी—

१—गंगानाथ

२—कायानाथ (परंतु, आगे देखिए)

३—कपिलानी—अजयपाल द्वारा प्रवर्तित

४—नीमनाथ
५—पारसनाथ } दोनों जैन हैं ।

(८) हेठनाथ—

१—लक्ष्मणनाथ । कहते हैं, ये ही प्रसिद्ध योगी बालानाथ थे । (यो ग प्रवाह पृ० १८६) इसकी दो शाखाएँ हैं ।

२—दरियापंथ—हरद्वार के चंद्रनाथ योगी ने इनको नाटेश्वरी (नाटेशरी) संप्रदाय का माना है और अलग स्वतंत्र पंथ होने में संदेह उपस्थित किया है । परन्तु टिला में उद्भूत स्वतंत्र संप्रदाय के रूप में भी इसकी ख्याति है । दरियापंथी साधु क्वेटा और अफगानिस्तान तक में हैं ।

३—नाटेशरी—अंबाला और करनाल के हेठ तथा करनाल के बाल जाति वाले इसी शाखा के हैं । कुछ लोग कहते हैं, रांभा इसी संप्रदाय में थे ! डा० बड़थवाल के मत से बालानाथ ही बालयती थे इसलिए उन्हें ही लक्ष्मणनाथ कहते हैं । पंजाब में बालानाथ का टीला प्रसिद्ध है ।

४—जाफर पीर—अपने को ये लोग रांभा और बालकेश्वरनाथ के अनुयायी (या संबद्ध) मानते हैं, इसलिये इनका संबंध नाटेशरी

संप्रदाय से जोड़ा भी जा सकता है। कभी-कभी इनका संबंध संतोप नाथ से भी जोड़ा जाता है। ये लोग अधिकांश मुसलमान हैं।

(६) आई पंथ के चोलीनाथ—हठ योग प्रदीपिका के घोड़ा चूली सिद्ध से इस संप्रदाय का संबंध होना संभव है। घोड़ाचूली परंपरा के अनुसार गोरखनाथ के गुरुभाई थे। इनकी कुछ हिंदी रचनाएँ भी मिली हैं।

१—आई पंथ का संबंध करकाई और भूटाई दोनों से बताया जाता है। पागलवात्रा के मत से करकाई ने ही आई पंथ का प्रवर्तन किया था। ये दोनों गोरक्षनाथ के शिष्य थे। हरद्वार के आईपंथी अपने को पीर पारसनाथ का अनुयायी बताते हैं। आई देवी (माता) की पूजा करने के कारण ये लोग आईपंथी कहलाए। ये लोग गोरक्षनाथ की शिष्या विमला देवी को अपनी मूल प्रवर्तिका मानते हैं। पहले ये लोग नाम के आगे आई जोड़ा करते थे, नाथ नहीं। पर नरभाई के शिष्य मस्तनाथ जी के बाद ये लोग भी अपने नाम के आगे 'नाथ' जोड़ने लगे।

२—मस्तनाथ—ये लोग 'वात्रा' कहे जाते हैं। गलती से कभी 'बावा' अलग संप्रदाय मान लिया जाता है।

३—आई पंथ (?)

४—बड़ी दरगाह } दोनों ही मस्तनाथ के शिष्य हैं। बड़ी वाले
५—छोटी दरगाह } मांस-मदरा नहीं सेवन करते, छोटी वाले करते हैं।

(१०) वैराग पंथ, रतननाथ

१—वैराग पंथ—भरथरी (भर्तृहरि) द्वारा प्रवर्तित

२—भाईनाथ (?) एक अनुश्रुति के अनुसार भाईनाथ—जो अनाथ बालक थे और मेवों द्वारा पाले पोसे गए थे—भरथरी के अनुयायी थे।

३—प्रेमनाथ

४—रतननाथ—भर्तृहरि के शिष्य। पेशावर के रतननाथ ने जो बाह्य मुद्रा नहीं धारण करते थे, कभी टोके जाने पर छाती खोल के मुद्रा

दिखा दी थी—ऐसी प्रसिद्धि है। दरियानाथ से भी इनका संबंध बताया जाता है। मुसलमान योगियों में इनका बड़ा मान है। इनके नाम से संबद्ध तीर्थ काबुल और जलालाबाद में भी हैं।

५—कायानाथ या कायमुद्दीन—कायानाथ के शरीर के मल से बना हुआ बालक कायानाथ वाद में चलकर सिद्ध और संप्रदाय-प्रवर्तक हुआ।

(११) जैपुर के पावनाथ—

१—जालंधरिपा

२—पा-पंथ (?)

३—कानिया—गोपीचंद्र इसी शाखा के सिद्ध है। गोपीचंद्र का नाम सिद्ध संगरी है। सपेरे इनको अपना गुरु मानते हैं।

४—वामभाग (?)

(१२) धजनाथ—

१—धजनाथ महावीर हनुमान के अनुयायी बताए जाते हैं। प्रसिद्धि है कि सिंहल में जब मत्स्येन्द्रनाथ भोगरत थे उस समय उनका उद्धार करने गोरखनाथ गए थे। उनसे हनुमान की लड़ाई हुई थी। बाद में हनुमान को उनका प्रभाव मानना पड़ा था। चौदहवीं शताब्दी के मैथिल ग्रंथ वर्णरत्नाकर में सिद्धों की सूची में 'धज' नामधारी दो सिद्धों का उल्लेख है। विविक्किधज और मगरधज। प्रसिद्धि है कि मकरधज हनुमान के पुत्र थे। संभवतः विविक्किधज और मगरधज इस पंथ से संबद्ध हों। कहते हैं इनका स्थान सिंहल या सीलोन में है। परंतु यह भूल है। आगे देखिए। डा० बड़थवाल ने लिखा है कि हनुमंत वस्तुतः वक्रनाथ नामक योगी का ही नामांतर है।

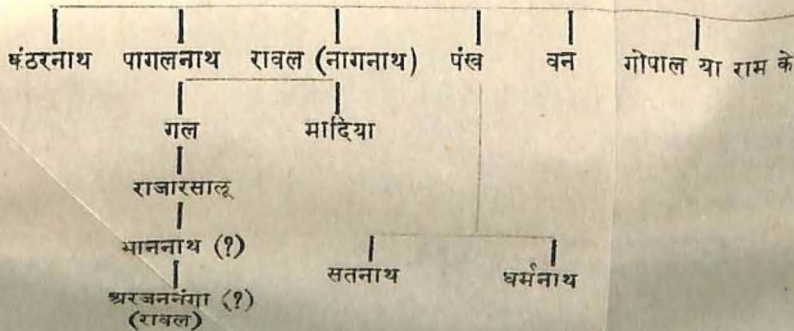
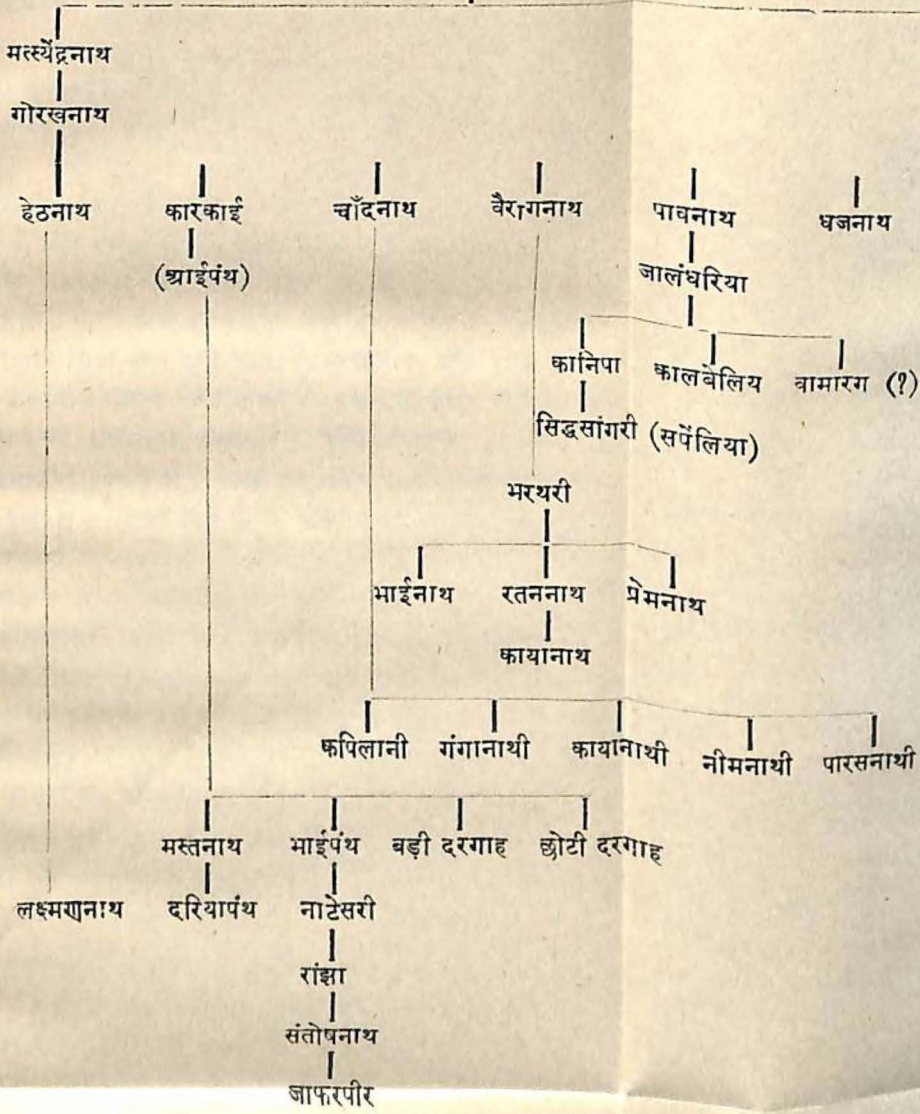
ऊपर इन योगियों के मुख्य मुख्य स्थानों का उल्लेख किया गया है। वस्तुतः सारे भारतवर्ष में इनके मठ और अखाड़े हैं। अंगना (उदयपुर) आदि (बंगाल), काद्रिमठ (कर्नाटक), गंभीरमठ (पूना), गरीबनाथ का टिला (सारमौर स्टेट), गोरक्षेत्र (गिरनार), गोरखवंशी (दमदम, बंगाल), चंद्रनाथ (बंगाल), चंचुलगिरिमठ (मद्रास प्रांत) व्यम्बक

(१६)

मठ (नासिक), नीलकंठ महादेव (आगरा), नोहरमठ (बीकानेर),
पंचमुखी महादेव (आगरा), पाराधुनी (बम्बई), पीर सोहर (जम्मू),
बत्तीस सराला (सतारा), भर्तृगुफा (ग्वालियर) भर्तृगुफा (गिरनार),
मंगलेश्वर (आगरा), महानादमंदिर (चर्दवान, बंगाल), महामंदिरमठ
(जोषपुर), योगिगुहा (दिनाजपुर), योगिभवन (बगुड़ा, बंगाल),
योगिमठ (मेदिनीपुर), लादुवास (उदयपुर), हांडीभरंगनाथ का मंदिर
(मैसूर), हिंगुग्रामठ (जैपुर) आदि इनके मठ हैं जो समूचे भारतवर्ष में
फले हुए हैं । यह नहीं समझना चाहिए कि जिस पंथ का जो मुख्य स्थान है
उसके अतिरिक्त और कोई स्थान उनके लिये आदरणीय नहीं है । वस्तुतः
सभी पंथ सब स्थानों का सम्मान करते हैं । ऊपर के विवरण से निम्नलिखित
पंथों का प्रसार जाना जाता है ।

नाथ संप्रदाय

शिव (आदिनाथ)



H.S. Srivastava

HARI SHANKER SRIVASTAVA
M. A; Ph. D., F. R. A. S. (London).
Professor & Head of the Department of History
UNIVERSITY OF GORAKHPUR

ध्यान से देखा जाय तो गोरक्षनाथ के प्रवर्तित संप्रदायों में कई नाम परिचित और पुराने हैं। कपिलानी अपना संबंध कपिलमुनि से बताते हैं और इनका मुख्यस्थान गंगासागर में है, जहाँ कपिलमुनि का आश्रम था। कपिलमुनि सांख्य शास्त्र के प्रवर्तक माने जाते हैं। सांख्य और योग का घनिष्ठ संबंध है। भागवत में कपिलमुनि योग और वैराग्य के उपदेश के रूप में प्रसिद्ध हैं। सांख्यशास्त्र को निरीश्वर योग कहते हैं और योगदर्शन कोेश्वर सांख्य। ऐसा जान पड़ता है कि कपिलमुनि के अनुयायी जो वैष्णव योगी थे, गोरक्षनाथ के मार्ग में बाद में आ मिले थे। चांदनाथ संभवतः वह प्रथम सिद्ध थे जिन्होंने गोरक्षनाथ को स्वीकार किया था। इसी शाखा के नागनाथी और पारसनाथी नेमिनाथ और पार्श्वनाथ नामक जैनतीर्थंकरों के अनुयायी जान पड़ते हैं। जैनसाधना में योग का महत्वपूर्ण स्थान है। नेमिनाथ और पार्श्वनाथ निश्चय ही गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती थे। उनका यह संप्रदाय गोरक्षनाथ योगियों में अन्तर्भुक्त हुआ है। कहना व्यर्थ है कि जैनमत वेद और ब्राह्मण की प्रधानता नहीं मानता। भरथरी के वैरागपंथ पर आगे विचार किया जा रहा है। पावनाथ के जालंधरपाद संभवतः वज्रयानी सिद्ध थे। उनकी जितनी पोथियाँ मिली हैं वे सभी वज्रमान की हैं और उनके शिष्य कृष्णपाद ने अपने को स्वयं कापालिक कहा है। उनके दोहा कोप की मेखला टीका से उस कापालिक साधना का परिचय मिलता है। कापालिक का अर्थ सब समय शैव कापालिक हों नहीं होता। परंतु कान्हूपाद के भजनों और दोहों में कायायोग या हठ योग का पूर्व रूप अवश्य मिल जाता है, जो हो, इसमें तो कोई संदेह नहीं कि जालंधरपाद का पूरा-का-पूरा संप्रदाय बौद्ध वज्रयान से संबद्ध था। ध्वजनाथ के त्रिपय में आगे विचार किया जा रहा है। ये सभी पंथ भिन्न-भिन्न धर्म साधनाओं से संबद्ध होने पर भी योगमार्गी अवश्य थे।

आई पंथ वाले विमलादेवी के अनुयायी माने जाते हैं। आई अर्थात् माता। ये लोग अपने नाम के सामने नाथ न जोड़कर आई जोड़ा करते थे। करकाई और भूछाई का वस्तुतः नाथवंथो नाम कर्कनाथ और भूछनाथ (शंभुनाथ ?) होना चाहिए। माता की पूजा देखकर अनुमान होता है कि ये किसी शाक्तमत से गोरक्षनाथ के योगमार्ग में अंतर्भुक्त होंगे। विमलादेवी गोरक्षनाथ की शिष्यता बताई जाती है परंतु नि त्या हि क ति ल क में एक महाप्रभावशालिनी सिद्धा विमलादेवी का नाम है, जो मत्स्येन्द्रनाथ

की मतानुवर्तिनी रही होंगी। उन्होंने गोरक्षनाथ से दीक्षा भी ली हो तो आश्चर्य नहीं। हस्तिनापुर में कोई वैश्य जाति के सेठ थे, नाम था शिवगण। उनकी पुत्री का नाम त्रिवेदी था। गुप्तनाम श्री गुप्तदेवी था। एकबार मेरी के शब्द से इन्होंने बौद्धों को वित्रासित किया। तब से इनकी कीर्ति का नाम बौद्धत्रासिनी (बोधत्रासनी) माता पड़ गया। जब उनका जन्म हुआ तो स्त्री रूप में उत्पन्न हुई थीं पर अधिकार-काल में पुरुष मुद्रा में दिखीं और बलपूर्वक अधिकार दखल किया। परंतु पशु लोग (पाखंडी) उन्हें स्त्री रूप में ही देखते थे। इनके दस नाम हैं—

विमला च शिखा चैव त्रिवेदी (च) सुशोभना,
नागकन्या कुमारी वंधारणी पयोधारणी,
रक्षाभद्रा समाख्याता देव्या नामानि वै दश,
नामान्येतानि यो वेत्ति सोऽपि कौलाहो (हयो ?) भवेत् ॥

यह कह सकना कठिन है कि यही विमलादेवी आईपंथ की पूजनीया विमलादेवी हैं या नहीं।

स्पष्ट ही, गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित कहे जानेवाले पंथों में पुराने सांख्य योगवादी, बौद्ध, जैन शाक्त सभी हैं। सब को एकमात्र सामान्यधर्मिता योग मार्ग है।

शिव के द्वारा प्रवर्तित संप्रदाय भी गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती होने चाहिए। इन्हें स्वीकार करके भी गोरक्षनाथ ने जब अपने नाम से इन्हें नहीं चलाया तो कुछ-न-कुछ कारण होना चाहिए। मेरा अनुमान है कि ये लोग मंत्र-तंत्र तो करते होंगे पर हठयोग की सिद्धियों से कोई संबंध नहीं रखते होंगे। यह लक्ष्य करने की बात है कि शिव द्वारा प्रवर्तित कहे जानेवाले संप्रदायों का प्रसार अधिकतर काश्मीर, पश्चिमी पंजाब, पेशावर और अफगानिस्तान में है, जहाँ अत्यन्त प्राचीनकाल से शैवमत प्रबल था। ज्ञान की वर्तमान अवस्था में इससे कुछ अधिक कहना संभव नहीं है।

प्रस्तुत संग्रह के सिद्ध

इस संग्रह में निम्नलिखित नाथ सिद्धों की बानियाँ संगृहीत हुई हैं।

- | | |
|-------------------------------|--------------------------|
| (१) अजयपाल जी | (१३) नागाअर्जन जी |
| (२) काणेरी (सती, पाव) | (१४) पार्वती जी |
| (३) गरीबजी | (१५) पृथ्वीनाथ जी |
| (४) गोपीचन्द्र जी | (१६) बालनाथ जी |
| (५) घोड़ाचौली | (१७) बालगुन्दाई |
| (६) चरपटनाथ | (१८) भरथरी |
| (७) चौरंगीनाथ | (१९) मच्छेन्द्र नाथ जी |
| (८) चौणकनाथ (चुणकर नाथ) | (२०) महादेव जी |
| (९) जलन्ध्री पाव | (२१) रामचन्द्र जी |
| (१०) दत्त जी (दत्तात्रेय) | (२२) लपमण जी |
| (११) देवल जी | (२३) सतवंती जी |
| (१२) धूधलीमल जी | (२४) सुकुल हंस जी |

(२४) हणवन्तजी

इनमें महादेव-पार्वती और रामचंद्र जी के नाम से प्राप्त रचनाओं के वास्तविक रचयिता कौन हैं, यह कहना कठिन है। इन पदों में किसी सिद्ध ने इन देवताओं के उपदेश देशी भाषा में लिख लिए होंगे, शेष में से कुछ का पता विविध स्रोतों से चल जाता है। कुछ सिद्धों के बारे में बहुत-कुछ निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि वे गोरखनाथ के समसामयिक रहे होंगे। मच्छेन्द्र नाथ तो उनके गुरु ही थे, शेष में से चौरंगीनाथ, नागार्जुन, चुणकरनाथ, और चरपटी नाथ के बारे में जो सूचना प्राप्त है उनके आधार पर इन्हें गोरखनाथ का समसामयिक या थोड़ा परवर्ती माना जा सकता है।

(१) चौरंगीनाथ—तिब्बती परंपरा में ये गोरक्षनाथ के गुरुभाई माने गए हैं। इस संग्रह में उनकी 'प्राण-संकली' नामक रचना प्रकाशित की जा रही है। इससे पता चलता है कि ये राजा सालवाहन के पुत्र मच्छेन्द्र नाथ के शिष्य और गोरखनाथ के गुरुभाई थे। यह भी पता चलता है कि इनकी विमाता ने इनके हाथ पैर फटना दिए थे। पंजाब की लोककथाओं के पूरनभगत से अभिन्न माने जाते हैं। चौरंगी नाथ की प्राणसंकली की भाषा में आरंभ में पूर्वी है जो बाद में चलकर राजस्थानी-मिश्रित हो जाती है। इस पद से अनुमान किया जा सकता है कि वे पूर्वी प्रदेश के रहनेवाले थे। पूरनभगत की कथा से इनके जीवन की घटनाओं का साभ्य देखकर कदाचित् दोनों को एक समझ लिया गया हो।

(२) नागार्जुन—महायान के मत के प्रसिद्ध नागार्जुन से यह भिन्न थे। अलवेरूनी ने लिखा है कि एक नागार्जुन उनसे लगभग सौ वर्ष पहले वर्तमान थे। साधनामाला में ये कई साधनाओं के प्रवर्तक माने गए हैं। इन साधनाओं से ये शवरपाद और कृष्णाचार्य के समसामयिक सिद्ध होते हैं। प्रबंध चिंतामणि में पादलिप्त सूरि के शिष्य एक नागार्जुन की कथा है। यह कहना कठिन है कि ये नागार्जुन नाथ सिद्ध नागार्जुन से अभिन्न थे या नहीं। परवर्ती हिंदी पुस्तकों में नागाश्रजंद और नागाश्रजंन नाम से इन्हीं का उल्लेख है। ऐसा जान पड़ता है कि नाथ सिद्ध नागार्जुन गोरखनाथ के थोड़े ही बाद हुए थे। नागनाथ नाम के सिद्ध बारहवीं शताब्दी में हुए हैं। कभी कभी नागार्जुन और नागनाथ को एक ही मान लिया गया है।

(३) चुणकरनाथ—डा० बड्धवाल ने इन्हें गोरखनाथ का समसामयिक और चरपट नाथ का पूर्ववर्ती सिद्ध माना है (योग प्रवाह पृ० ७२)।

(४) चरपट या चरपटी नाथ—ये गोरखनाथ से थोड़ा परवर्ती जान पड़ते हैं। वज्रयानी सिद्धों में भी इनका नाम आता है। तिब्बती परंपरा में इन्हें मीनपा का गुरु माना गया है। नाथ परंपरा में इन्हें गोरखनाथ का शिष्य कहा जाता है। इनके नाम से प्रचलित बानियों में रस-विषयक इनके ज्ञान का पता चलता है। एक पद में इन्होंने अपने का गोपीचंद का गुरुभाई कहा है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि आरंभ में ये रसेश्वर संप्रदाय में थे और बाद में गोरखनाथ के प्रभाव में आ गए।

काणेरी—इस संग्रह में काणेरी के कई पद हैं। कुछ लोग कानफा और काणेरी को एक ही सिद्ध मानते हैं। योगि संप्रदायाविष्कृति में कृष्णपाद को ही कर्णारिपा या काणेरी नाथ कहा गया है। किंतु प्रेमदास ने अपनी सिद्धचंदना में इन दोनों को अलग अलग सिद्ध समझा है। जान पड़ता है काणेरी के दीर्घ ईकारांत रूप को देखकर परवर्ती काल में इन्हें खोसिद्ध मान लिया गया है। इनके नाम से पाए जाने वाले पद एक प्रति में सती काणेरी के नाम से मिलता है तो दूसरी प्रति में काणेरी पाव के नाम से। कृष्णपाद, कान्हूपा, कानफा आदि नामों को मैंने एक ही माना है और उनके विषय में नाथ संप्रदाय नामक पुस्तक में विस्तार से लिखा है। ये जालंधर पाद के शिष्य थे और गोरखनाथ के समसामयिक थे। चर्यापदों में इनके गान मिलते हैं और उन्होंने स्वयं अपने को कापालिक कहा है। वर्तमान नाथ पंथ में इनके नाम का एक उपसंप्रदाय (वामारग, वाममार्ग) आज भी जीवित है परंतु उसे आधा संप्रदाय ही माना

है। इनके दोहों का एक संग्रह दोहाकोष नाम से हरप्रसाद शास्त्री ने छपाया था उस पर मेखला नामक संस्कृत टीका भी मिलती है जो संभवतः इनकी शिष्या मेखला की लिखी हुई है।

जालंधरीपाव—(जलंध्रीपाव) ये उपर्युक्त सिद्ध कृष्णपाद के गुरु थे। ऊपर इनकी चर्चा हो चुकी है। नवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में ये वर्तमान थे। राजा गोपीचंद्र की माता मयनामती इनकी शिष्या थीं। माता के कहने से ही राजा गोपीचंद्र ने इनसे दीक्षा ली थी।

गोपीचन्द्र—गोपीचन्द्र या राजा गोविन्दचन्द्र जालंधर के नाथ के शिष्य बताए जाते हैं। माता के उपदेश से इन्होंने अपनी दो सुन्दरी रानियों—उदुना और पुदुना (उदयिनी और पद्मिनी)—को छोड़कर वैराग्य लिया था। रानियों ने इन्हें फिर से गृहस्थ धर्म में प्रवेश करने का आग्रह किया था परन्तु ये वैराग्य में दृढ़ रहे। गोपीयंत्र या सारंगी के ये ही आविष्कर्ता माने जाते हैं।

भरथरी—भर्तृहरि का प्राकृत रूप है। भर्तृहरि संस्कृत साहित्य में बहुत परिचित है। उनके तीन शतक काव्य मर्मज्ञों के हृदय हार बने हुए हैं। वाक्यपदीय नामक व्याकरण ग्रंथ के भी ये रचयिता माने जाते हैं। संभवतः ये सन् ईस्वी की सातवीं शती के पूर्व वर्तमान थे। क्योंकि इतसिंग नामक चीनी यात्रा ने जा ६७२-६९५ ई० तक बौद्ध देशों का भ्रमण करता रहः इनके नाम और ग्रंथों से परिचित था। ह्वेन त्सांग ने भी इनकी चर्चा की है। और इन्हें बौद्ध बताया है। परन्तु इनके ग्रंथों को देखने से ये शैव ही जान पड़ते हैं। छठी-सातवीं शताब्दी की लोकभाषा के अन्य कवियों के लिखे हुए जो नमूने प्राप्त हैं, उनसे मिलान करने पर प्रस्तुत संग्रह में भरथरी के नाम से संगृहीत पदों की भाषा आर्वाचीन माळूम होती है। जान पड़ता है कि भर्तृहरि ने लोकभाषा में कुछ पद लिखे थे जिनकी भाषा क्रमशः बदलती गई। नाथमार्ग में अनेक पुराने संप्रदायों के अंतर्भुक्त हो जाने के बाद भर्तृहरि के ये पद भी नाथ सिद्धों के संग्रहों में गृहीत हो गए पर उनकी भाषा बहुत बदल गई। हमारे संग्रह में उनका जो रूप उपब्लध है वह पंद्रह शताब्दी के पहले का नहीं हो सकता।

वैराग्य शतक के कई श्लोक अत्यंत भ्रष्ट रूप में संगृहीत हैं। इनके अर्थ रूप का देखकर कदाचित् भाषा विशेषज्ञों को कोई नयी बात सूझ जाय इस आशा से उन्हें ज्यों-का-त्यों संग्रह कर दिया गया है।

अजयपाल—(अजैपाल) डा० बड़थवाल ने इन्हें गढ़वाल का राजा माना है। इनको रचनाओं में 'दीवान' पद मुसलिम दराबर के दीवानों की याद दिलाता है। 'तम्बा (तम्बू कैम्प) भी इस अनुमान की पुष्टि करता है कि वे मुसलिम काल में ही पैदा हुए थे। पं० हरिकृष्ण रतुड़ी का मत है कि राजा अजयपाल ने ही राजराजेश्वरी और सत्यनाथ दोनों मंदिरों की स्थापना संवत् १५१२ के लगभग की जब राजधानी चांदपुर से हटाकर देवलगढ़ में स्थापित हुई (योग प्रवाह पृ० २०२) इस प्रकार अजयपाल का समय पन्द्रहवीं शताब्दी में होना चाहिए। बड़थवाल जी का कहना है कि ये राजा थे, इसका एक प्रमाण यह है कि नाथसिद्धों में सिर्फ तीन ऐसे हैं जिन्हें नाथ या पाव जैसे आदरार्थक विशेषण सहित नहीं स्मरण किया गया। भरथरी, गोपीचंद और अजैपाल। प्रथम दो राजा थे, इसलिये ये भी राजा रहे होंगे। परंतु इसके विपरीत यह भी कहा जा सकता है कि जिस प्रकार भरथरी और गोपीचंद को स्पष्ट रूप से राजा कहा गया है उस प्रकार अजैपाल को नहीं कहा गया, बल्कि 'बाबा अजयपाल' कहा गया है। इसलिये उनका राजा होना निश्चित नहीं है। मुझे बड़थवाल जी के मत में विशेष सार नहीं दिखाता किन्तु इतना निश्चित जान पड़ता है कि ये चौदहवीं शताब्दी के बाद ही हुए होंगे। वर्णरत्नाकर की सूची में इनका नाम नहीं है।

लक्ष्मण या लक्ष्मणनाथ,—बालनाथ, बालगुंदाई भी इन्हीं के नाम जान पड़ते हैं। अजयपाल की शब्दी में एक पद इस प्रकार आता है।

“लपमण कहे हो बाबा अजयपाल तुम कृष्ण आरंभ थीरं”

इससे अनुमान होता है कि लपमण (लक्ष्मणनाथ) के ये गुरु थे।

परंपरा से प्रचलित है कि लपमण नाथ का ही नाम बालनाथ या बालापीर था।

नाथ संप्रदाय में जा आईयंथ गोरक्षनाथ की शिष्या विमलादेवी द्वारा प्रवर्तित माना जाता है उषा संप्रदाय में थे। इनका पूरा नाम बालगोविंद है। आईयंथ वाले अयने नाम के साथ आई जोड़ते हैं। इसलिये इनका नाम बालगोविंददाई पड़ा जिसका संक्षिप्त रूप बालगुंदाई हुआ। संभवतः ये तेरहवीं शताब्दी में वर्तमान थे। और कर्काई और भूशाई के थोड़े परवर्ती थे। बालनाथ, लक्ष्मण नाथ और बाल गुंदाई के नाम से पाए जाने वाले कई पद समान हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि ये तीनों नाम एक ही सिद्ध के हैं।

हण्वंत जी—इनके बारे में कुछ निश्चित नहीं मालूम । लेकिन ये धज संप्रदाय के प्रवर्तक माने जाते हैं । इनके दो शिष्य मगरधज और विविकिधज (मकरध्वज और विवेकजध्वज) वर्णरत्नाकर की सिद्धसूची में मिल जाते हैं । इससे अनुमान किया जा सकता है कि ये चौदहवीं शताब्दी के पहले ही हो चुके थे । रामभक्त हनुमान जी के साथ इनको अभिन्न मान लिया गया है जो नाम-साध्य के कारण उत्पन्न भ्रांति मात्र है । इनके नाम से प्राप्त पदों में कुछ पद थोड़ा बदलकर कबीरदास के नाम पर भी चलते हैं । इससे भी यह सिद्ध होता है कि ये कबीरदास के पूर्ववर्ती थे ।

हण्वंत की वानियों में पूर्वी भाषा के लक्षण दिखते हैं । ऐसा जान पड़ता है कि ये किसी पूर्वी प्रदेश के सिद्ध थे ।

घोड़ाचौली—हठयोग प्रदीपिका में जिन सिद्धों को कालदंड का खंडन करनेवाला बताया गया है उनमें घोड़ाचौली का भी नाम है । आईपंथ के प्रसिद्ध सिद्ध चौलीनाथ ये ही जान पड़ते हैं । इस प्रकार ये चौदहवीं शताब्दी से बहुत पहले उत्पन्न हुए होंगे, ऐसा अनुमान किया जा सकता है । इनका समय सन् ईस्वी की बारहवीं शताब्दी के पूर्व माना जा सकता है । इस संग्रह में इनको जो वानियाँ संगृहीत हैं उनमें रावल, पागल, वनखंडी, आई पंथ, पंखि (पंक) धूज या धज, गोपाल, इन पंथों की चर्चा है । इससे जान पड़ता है कि इन पंथों के आविर्भाव के बाद ही ये हुए होंगे । अपनी सबदी में ये अपने को मल्लींद्र का दास कहा है ।

धूधली मल और गरीबनाथ—“मुँहणोत नैणसरी ख्यात” में बताया गया है कि ये गरीबदास के गुरु थे । लाखड़ी से १२ कोस की दूरी पर धीणोद है । वहाँ के अजयसर पर्वत पर धूधलीमल रहते थे । इन्हीं के शिष्य गरीबनाथ थे । इनके आशीर्वाद से भीम कच्छ का राजा हुआ था । इनके शिष्य गरीबनाथ के शाप से घोषों का राज्य नष्ट हुआ था । प्रभास-पाटन के एक शिलालेख से जाड़ेचा भीम का समय संभत् १४४२ (१३८७ ई०) है इसलिये धूधलीमल और गरीबनाथ का समय भी इसी सन् भी चौदहवीं शती का उत्तरार्ध होना चाहिए ।

दत्तजी—दत्तजी दत्तात्रेय का विकृत रूप है दत्तात्रेय की संस्कृत रचनाएँ प्रसिद्ध ही हैं ऐसा जान पड़ता है कि किसी कम पढ़े लिखे साधु ने संस्कृत श्लोकों को बुरी तरह बिगाड़कर और उनमें अपनी रचना जोड़कर चला

दिया है। संभवतः इन पदों के लेखक पंद्रहवीं शताब्दी में हुए थे क्योंकि 'रोजी' 'रोजा' जैसे शब्द इन रचनाओं में प्राप्त होते हैं।

देवलनाथ—ये गरीबनाथ के पूर्ववर्ती थे। इनके विषय में विशेष कुछ नहीं मालूम है।

पृथ्वीनाथ—ये कबीर के परवर्ती थे क्योंकि इनकी रचनाओं में कबीर का नाम आता है। इस प्रकार ये सोलहवीं शताब्दी के आस-पास हुए होंगे।

परवत सिद्ध—नाथ योगियों की प्राप्त वाणियों में नामों की विचित्र तोड़ मरोड़ है। कभी कभी एक ही नाम को उच्चारण-विकृति के कारण भिन्न भिन्न मान लिया गया है। ऐसा जान पड़ता है कि परवत सिद्ध (जो निश्चित रूप से चौदहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती है,) बाद में उसी प्रकार 'पार्वती' या 'पारवती' बना दिए गए जिस प्रकार फाणरी पाव 'सती फाणरी' हो गए। इसका एक कारण यह है कि 'परवत' शब्द का तृतीयान्त या सप्तम्यन्त पुराना रूप 'परवति' होता है। बाद में इस इकार ने इस सिद्ध को ली सिद्ध समझने की भ्रान्ति पैदा की। इस संग्रह में परवत सिद्ध का एक भूगोल पुराण दिया हुआ है। यह 'पुराण' पंजाब के एक सज्जन ने भेजा था। गुरु नानक द्वारा रचित बताई जानेवाली प्राण संकली (तरन तारन से प्रकाशित) में यह हू-व-हू इसी रूप में है। इसलिये इसके रचयिता के बारे में सन्देह होता है। परन्तु यह फाकी पुरानी भाषा है। इस में संदेह नहीं। इससे खड़ी बोली का एक पुराना रूप प्राप्त होता है। इसके इसी महत्त्व को देखते हुए संदेहास्पद होने के कारण इसे परिशिष्ट में दे दिया गया है।

सुकुल हंस और सतवती के बारे में कुछ मालूम नहीं।

सुकुल हंस और सतवती के बारे में कुछ मालूम नहीं।

उक्त प्रकार इस संग्रह में जिन नाथसिद्धों की वाणियाँ संगृहीत हैं उनमें से काशी चौदहवीं शताब्दी (ईसवी) के पूर्ववर्ती हैं। कुछ चौदहवीं शताब्दी के और बहुत थोड़े उसके बाद के। भाषा की दृष्टि से इन पदों का महत्त्व स्पष्ट है। यद्यपि इन वाणियों के रूप बहुत-कुछ विकृत हो गए हैं, परन्तु भाषा का कुछ-न-कुछ पुराना रूप उनमें रह गया है। खड़ी बोली का तो इन पदों में बहुत अच्छा प्रयोग हुआ है। खड़ी बोली के धाराप्रवाहिक प्रयोग का नया स्रोत इन पदों में पाया जाएगा।

नाथ सिद्धों की बानियाँ

नाथ सिद्धों की बानियाँ

अथ सिध बंदनां लिष्यते^१

प्रेमदास लिखित

नमो नमो निरंजनं भ्रम कौ विहंडनं ।
नमो गुरुदेवं अगम पंथ भेवं ॥ १ ॥
नमो आदिनाथं भए हैं सुनाथं ।
नमो सिध मछिन्द्रं वडो जोगिन्द्रं ॥ २ ॥
नमो गोरष सिधं जोग जुगति विधं ।
नमो चरपटरायं गुरू ग्यात पायं ॥ ३ ॥
नमो भरथरी जोगी ब्रह्मरस भोगी ।
नमो वालगुंदाई कीयौ क्रम पाई ॥ ४ ॥
नमो पृथीनाथं सदा नाथ हाथं ।
नमो हांडीभडुंगं कीयौ क्रम पंडं ॥ ५ ॥
नमो ठीकरनाथं सदा नाथ साथं ।
नमो सिध जलंधरी ब्रह्म युधि संचरी ॥ ६ ॥
नमो कांहीपायं गुरू सबद भायं ।
नमो गोपाचंदं रमत्त ब्रह्म नंदं ॥ ७ ॥
नमो औषडुदेवं गोरष सबद लेवं ।
नमो बालनाथं निराकार साथं ॥ ८ ॥
नमो अजैपालं जीत्यौ जमकालं ।
नमो हनूमानं निरंजनं पिछानं ॥ ९ ॥

- नमो नरसिहदेवं अलष अभेवं ।
 नमो हालीपावं निरालंब ध्यावं ॥ १० ॥
 नमो मुकंद भारथी निरंजन स्वारथी ।
 नमो मालीपावं विमल सुध भावं ॥ ११ ॥
 नमो मंडकीपावं निरंतर सुभावं ।
 नमो सिध हरताली कालं कंठ कटाली ॥ १२ ॥
 नमो सिध काणेरी लीयौ मन फेरी ।
 नमो धूधलीमलं अवीह अकलं ॥ १३ ॥
 नमो फुरकट नामं रमत रामं रामं ।
 नमो सिध टनटनी लागी अनह धु धुनी ॥ १४ ॥
 नमो सिध चौरंगी प्रम जोति संगी ।
 नमो कंथड़पायं नही मोह मायं ॥ १५ ॥
 नमो विध सिधं लीयौ मन उरधं ।
 नमो सिध कपाली नही चित चाली ॥ १६ ॥
 नमो कागभुसंडं त्रिवधि साप पंडं ।
 नमो काग चंडं कलपना विहड ॥ १७ ॥
 नमो बीर पछि उदै ग्यान लछि ।
 नमो सूरानंद प्रकृति निकंदं ॥ १८ ॥
 नमो भैरू नंदं रहै नृदंदं ।
 नमो सांवरं नंदं पूरण कला चंदं ॥ १९ ॥
 नमो चुणकरनाथं अगम पंथ पंथं ।
 नमो पूरण धीरं भरो अनभै सरीरं ॥ २० ॥
 नमो आत्मांरामं प्रम सुनिंधामं ।
 नमो गरीब सिधं गुरू सनद बिधं ॥ २१ ॥
 नमो भडंग नाथं पकडि नाथ हाथं ।
 नमो दडगड नाथं सदा जाके साथं ॥ २२ ॥
 नमो देवदत्तं मिलित तत्त त्तं ।
 नमो सुषदेवं अलष अभेवं ॥ २३ ॥
 नमो सिध चौरासी विग्यान प्रकासी ।
 नमो नौ जोगेस्वरं राते प्रमेस्वरं ॥ २४ ॥

नमो कपलदेवं लह्यौ ब्रह्म भेवं ।
 नमो सनक सनंदन करम काल घंडन ॥ २५ ॥
 नमो हस्तामलं सुतै सिध अमलं ।
 नमो अष्टावक्रं नही काल चक्रं ॥ २६ ॥
 नमो रामानंदं नही काल फंदं ।
 नमो कबीर कान्हं नृमल सुध ग्यानं ॥ २७ ॥
 नमो दास कपालं भरो ब्रह्म लालं ।
 नमो हरीदासं कीयौ ब्रह्म वासं ॥ २८ ॥
 नमो महरवानं निरंजन ध्यानं ।
 नमो ध्रू प्रह्लादं अगम अगाधं ॥ २९ ॥
 नमो नाम पीया प्रगट सप्त दीया ।
 नमो सरव साधं अगम अगाधं ॥ ३० ॥

दोहा—काम दहन कलिमल हरन ।
 अरि गंजन भव भंजनं ॥
 अनंत कोटि सिध साधनें ।
 प्रेमदास करि बंदनं ॥ ३१ ॥
 सिध बंदना जो पढ़ै ।
 संध्या अर फुनि प्रात ॥
 रोम रोम पात्तिग झड़ै ।
 तिमर अंध मिटि जात ॥ ३२ ॥
 सिध साधनें बंदनां ।
 निति प्रति करै जो संत ॥
 प्रेम कहै सहजही ।
 दरसै जोति अनंत ॥ ३३ ॥
 ॥ इती सिध बंदना संपूर्ण ॥

अथ दत्त असतोत्रं
 शंकराचार्य विरचित

जटा जूट विभूति भूषनं ।
 नष सष अषिडतं ॥
 बिस रज नव देह लीला ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ १ ॥ ३४ ॥

मुकुट केस वसेष वनिता ।
 वचन श्री मुष अमृतं ॥
 सम्रथं सव जोग सम्रथ ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ २ ॥ ३५ ॥
 अलिप वक्ता सुलिप निद्रा ।
 भोजन सुष मंजमं ॥
 उद्र पात्र निमष मात्र ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ३ ॥ ३६ ॥
 पात्र पवीत्र विचित्र वांनी ।
 वेद व्याकरण पंडिता ॥
 ग्यान अंजनं सभा मंडनं ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ४ ॥ ३७ ॥
 भेष टेक विचित्रक ।
 लोभ लवधि न लीयतं ॥
 निगन रूप निरास निहचै ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ५ ॥ ३८ ॥
 सिंध रूप निसंक नृभै ।
 निडर निसपति उनमनी ॥
 जोति रूप प्रकास पूरन ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ६ ॥ ३९ ॥
 बीत रागी तरक त्यागी ।
 लक्षत लब्ध समागमं ॥
 ऐका ऐकी निरापेपी ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ७ ॥ ४० ॥
 उग्र तेज अंकूर नूरं ।
 सूर बीर पराक्रमं ॥
 अग्म अनाहद अपार बानी ।
 सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ८ ॥ ४१ ॥
 सत सील संतोष धारण ।
 सुमरिणं सत सुमरणं ॥

संसार भोजल तिरण तारण ।
 सोहं दत्त डिगंवरं ॥ ९ ॥ ४२ ॥
 बाचंवरं नटाटंवरं ।
 चीतांवरं पीतांवरं ॥
 पहरै पाट पटंवरं ।
 तजि धरती ऊपर अंवरं ॥
 सोहं दत्त डिगंवरं ॥ १० ॥ ४३ ॥

॥ इती श्री संकाचारव्य विरंचयते दत्त अस्ता ॥

अजैपालजी की सप्तदी

मुंडे मुंडे भेष बितुंडे^१ ।
 नां वृक्षी सत गुर बाणी ॥
 सुनि^२ सुनि करि भूले पसुवा ।
 आपा सुध^३ न जांणी ॥ १ ॥ ४४ ॥
 नाभि सुनि तैं पवनां ऊठ्या^४ ।
 परम^५ सुनि मै पैसा^६ ॥
 तिहि सुनि तैं^७ पिंड^८ ब्रह्मंड उपज्या ।
 ते सुनि^९ है कैसा ॥ २ ॥ ४५ ॥
 तिह^{१०} सुनि तैं आपा कीधा^{११} ।
 आपा कूण^{१२} सू^{१३} कीधा ॥
 सुनि लागे ते मरि मरि गए ।
 आप अनन्त सिध सीधा ॥ ३ ॥ ४६ ॥
 पिंड तैं ब्रह्मंड ब्रह्मंड तैं पिंड ।
 पिंड ब्रह्मंड कथ्या न जाई ॥

१—ख. मूंडत मुंडे भेष बितुंडे; २—ख. सुन्य; ३—ख. सुधि; ४—
 ग. ऊठा; ५—ग. प्रम; ६—ख. पैठा; ७—ख. श्युं; ८—ख. पंड; ९—ख.
 सुना; १०—ख. तीनि; ११—ख. कीया; १२—ख. कौण; १३—ख. स्युं;

पिंड ब्रह्मंड दोऊ सम कर ।
 पिंड ब्रह्मंड समाई ॥ ४ ॥^१ ४७ ॥
 पृथ्वी के तत महल रचीला ।
 आप कै तत करीला आचारं ॥
 तेज कै तत दीपग बालिबा ।
 बाई कै तत हम करिबा बिचारं ॥ ५ ॥^२ ४८ ॥
 आकास का तंबा मैं करीबा ।
 मलिबा^३ मन राई का मानं ॥
 सुनि स्यंघासण^४ उलीचा ।
 वैसिबा प्रान पुरिस क^५ दीवानं ॥ ६ ॥ ४९ ॥
 जुरा मरन काल सरब व्यापै ।
 काम वसंत सरिरं ॥
 लषमण कहै हो बाबा अजैपाल ।
 तुम कृण अरम्भ थीरं ॥ ७ ॥ ५० ॥

१—यह पूरा पद ख. प्रति में इस प्रकार है:—

प्यंड थैं ब्रह्मांड ।
 प्यंड कथ्या नहीं जाई ॥
 प्यंड ब्रह्मांड दोउ समि करै ।
 प्यंड मैं ब्रह्मांड समाई ॥ ४ ॥

२—यह पद्य ख. प्रति में इस प्रकार है:—

पृथी कै तत रचीला ।
 आप कै भरिले भंडारं ॥
 तेज कै तत दीपक बालिबा ।
 बाई के करीले बिचारं ॥ ५ ॥

३—ख. मलेबा; ४—ग. सुधासत; ५—ख. का;

६—यह पद्य ख. प्रति में इस प्रकार है:—

जुरा मृत्यु काल व्यापै ।
 काम बस्त सरिरं ॥
 लषमण कहै हो बाबा अजैपाल ।
 तुम कौण आरंभ थैं थीरं ॥ ७ ॥

ब्रह्म अ गनिव जरांग^१ सी क्या ।
 कंदप देव सरीरं ॥
 जुरा मृत^२ पवन का भीषण ।
 जोगारंभ सुधीरं^३ ॥ ८ ॥ ५१ ॥
 द्वादस गगन स्थानं ।
 सोषि लीया जल मालं ॥
 षट चक्रा जोग धरि वैठा ।
 तबभाजि गया जम कालं ॥ ९ ॥ ५२ ॥

सती काणेरी जी का पद

आछै आवै मही मंडल ।
 कोई सू रां मनवानै रे लो ।
 देवता दाणां पापी मनवै ग्रस्यो ।
 कोइ सुराही गहि ल्यावै रे लो ॥ टेक ॥ ५३ ॥
 कबहू क मनवौ म्हारौ जती रे सन्यासी ।
 कबहू क मैंगल मातौ रे लौ ।
 कबहू क मनवौ म्हारौ उंनथि गोधलो ।
 कबहू क विषीया रंगि रातौ रे लो ॥ १ ॥ ५४ ॥
 कबहू क मनवौ म्हारौ माया त्यागै ।
 कबहू क बहुरि मंगावै रे लो ।
 कबहू क मनवौ म्हारौ मनसा भोगी ।
 कबहू क अभय भषावै रे लो ॥ २ ॥ ५५ ॥

१—ख. ज्रांग; २—ख. मृति; ३—ख. स्थीर

४—यह पद्य ग. प्रति में इस प्रकार है:—

द्वादस लहर गगन अस्थाने ।
 सो लीषीया जमकालं ॥
 षट चक्र जोग धरि वैठा ।
 तब भाभि गया जम जालं । ६ ॥

इही तौ वांध्या जोगी जती रे नथाइला ।
 जब लग मनवा नही बांध्या रे लौ ।
 पांहण पाहू लोहड़ै गडीला ।
 तेहू काल सिषा धारे लौ ॥ ३ ॥ ५६ ॥
 जोति देषि देषि पड़ै पतंगा ।
 नादै लीन कुरंगा रे लो ।
 रस कौ लोभी मैंगल मातौ ।
 साध पुरष ते भूरा रे लौ ॥ ४ ॥ ५७ ॥
 समदां की लहण्यां पार जु पाईला ।
 मनवा कां लहण्यां पार न आवै रे लो ॥
 आदिनाथ नाती मछिद्रनाथ पूता ।
 सति सति काणोरी गावे रे लो ॥ ५ ॥ ५८ ॥

काणोरी पाव जी' का पद

राग-गुंड

आछे आछे मही रे मंडल कोई सूरौ ।
 म्हारा मनवां नैं समभावै रे लो ॥
 देवता नैं दानू इनि मनवें व्याप्या ।
 मनवां नैं कोई ल्यावै रे लो ॥ टेक ॥ १ ॥ ५९ ॥
 जोति देषि देषि पड़े रे पतंगा ।
 नादै लीन कुरंगा रे लो ॥
 इहि रसि लुवधी मैंगल मातौ ।
 स्वादी पुरष ते भँवरा ले लो ॥ २ ॥ ६० ॥
 घड़ी एकै मनवौ जती रे सन्यासी ।
 घड़ी एकै मांगल मातौ ॥
 घड़ी एकै मनवौ उनंथ गो छिलो ।
 घड़ी एकै त्रिपिया रातौ रे लो ॥ ३ ॥ ६१ ॥

इंद्री वांध्या जोगी
 जती रे न होइवा ।
 जब लग मनबौ न
 वाधा रे लो ॥ ४ ॥^१ ६२ ॥
 समद लहरियां पार पाइए ।
 मनवांनी लहरिया पार पाइये रे लो ॥
 आदि नाथ नाती मछिंद्र नाथ पूता ।
 सती कणोरी इम बोल्या रे लो ॥ ५ ॥^२ ६३ ॥
 जागौ पसुवा जे मति हीणा^३ ।
 ब्यांह न पाया भेव^४ ॥
 काल विकालै^५ टाकर मारै ।
 सोवै कणोरी देव^६ ॥ ६ ॥ ६४ ॥
 द्योसैं चंदा रातै^७ सूर ।
 गगन मंडल मैं वाजै तूर ॥
 सति का सवद कणोरी कहै ।
 परम हंस काहै न रहै ॥ ७ ॥ ६५ ॥
 कहाँ उगै कहाँ अथवै ।
 कहाँ सूँ रैणि विहाई ॥
 पूछै काणोरी सुनि हो नागा अजंद ।
 पिंड छूटै प्रांन कहाँ समाई^८ ॥ ८ ॥ ६६ ॥
 सगौ नहीं संसार ।
 चित्ति^९ नहीं आवै बैरी ॥
 निरभै होइ निसंक ।
 हरधि मैं हस्यौ कणोरी ॥ ९ ॥ ६७ ॥

१-ये चार पद केवल क. प्रति में हैं ।

२-ये चार पंक्तियाँ केवल क प्रति में हैं ।

३-ख, हीन; ४-ख, भेवं; ५-ख, उकालां; ६-ख, देवं; ७-ख, दिवस
 चंदा रात्युं;

८-केवल ग, प्रति में यह पद्य है ।

९-ग, चिति;

हस्यौ कणोरी हरिष^१ मैं ।
 एकलडौ^२ आरंन ॥
 जुरा विछोही जो मरण^३ ।
 मरण विछोहया मन ॥ १० ॥ ६८ ॥
 अकल कणोरी सकलैं बंध ।
 विन परचै जोग बखाणैं धंध ॥
 विण परचै योगी न होसी रावल ।
 भुस कूट्यां क्यूं निकसै चावल ॥ ११ ॥ ६९ ॥
 मनवां मेरा बीज विजोवै ।
 पवना वाड़ि लगाई^४ ॥
 चेतन^५ रावल पहरे वैठा ।
 मृगा पेत न घाई^६ ॥ १२ ॥ *७० ॥

सिध गरीब जो की सवदी

काया नग्री में मन रावल ।
 अह्निसि सीझै तहां नृमल चावल ॥
 चावल सीझि पकाई डांवि ।
 सति सति भाषंत सिध गरीब ॥ १ ॥ ७१ ॥
 फाटी कंथा पांडी डीब ।
 आपौ राष्यां फिरैं गरीब ॥
 रूप विरप रो कंतरि^७ बास ।
 इहि^८ विधि रहिबौ^९ जोग अभ्यास ॥ २ ॥ *७२ ॥

१-ग, हरप; २-ग, ऐकलडै; ३-ग, मरद; ४-ग, लगावै; ५-ख, चेतनि;
 ६-ग, घाई ।

*१-१२ पद केवल ख प्रति में हैं ।

७-ख. विरप रा कांतरि; ८-ख. इन; ९-ख. रहिबा

* केवल यही एक पद ख. प्रति में मिलता है ।

पाताल की मीडकी अकास जंत्र बजावै ।
चंद्र सूरिज मिलै गंग जमन गीत गावै ॥
सकल ब्रह्मंड उलटि अधर नाचै डीव ।
सति सति भाषंत सिध गरीब ॥ ३ ॥ ७३ ॥

गोपीचंद जी की सबदी

राज तजेवा रे पूता पाट तजेवा^१ ।
तजेवा^२ हस्ती घोड़ा ॥
सति सति भाषंत माता मैणावंती^३ ।
कलि में जीवन थोड़ा ॥ १ ॥ ७४ ॥
राजा कै घर राणी होती माता ।
हमारै होती माई जी ॥
सत षणै चौबारे बैठंती माता ।
यह ग्यांन कहां थी लाई ॥ २ ॥^४ ७५ ॥
गुरु हमारै गोरष बोलियै ।
चरपट है गुर भाई ॥
सबद एक हमको नाथ जी दीया^५ ।
तेवो^६ लष्या मैणावंत माई ॥ ३ ॥ ७६ ॥
सौला सै राणी^७ वारा सै कन्था ।
बंगाल देस षड़ भोगी^८ ॥

१-२-ग. तजिलै; ३-ग. प्रति में 'रे पूता' अधिक पाठ है; ४-ख. प्रति में यह पद इस प्रकार है:—

राजा कै घरि राणी होती ।
हम घरि कहिये माई ॥
सात षणै महलिवे रहती माता ।
ज्ञान क हाथी लाई ॥

५-ग. में यह पंक्ति इस प्रकार है:—

ऐक सबद हमकूं गुरु गोरषनाथ दीया ।

६-ग. सोवो; ७-ग. में 'मै' अधिक; ८-ग. में 'भोगी जी';

धारह^१ वरस हमकुं^२ राज करण दे माता ।
 पीछै हूँगा^३ जोगी ॥ ४ ॥ ७७ ॥
 आजि आजि करंता पूता कालिह कालिह करंता ।
 काया करै कलाल की माठी जी ॥
 सति भापंत माता मैणावंती रे पूता ।
 यौ तन जलि बलि होइ मसाण की माठी जी ॥५॥७७८॥
 सात पणै मंदिर बैसता ।
 पौढ़ता सेज नु लाई ॥
 सोबणमै देही तुम्हारे पिता की होती ।
 सो जलि बलि कोइला थाई ॥ ६ ॥ ७९ ॥
 जोग न होसी रे पूता भोग न होसी ।
 नसी कसी^४ जलवित्र^५ की काया ॥
 सति सति भापंत माता मैणावंती रे पूता^६ ।
 भरंमि न भूलौ रे माया^७ ॥ ७ ॥ ८० ॥
 मरोगे मरि जाहुगे रे ।
 फिरि होउगे मसाण की छारं जी ॥
 कवहुक परं तत चीन्हैले रे पूता ।
 ज्यूं उतरौ संसार भौ पारं जी ॥ ८ ॥ ८१ ॥

१-ग. बारा; २-ग. मोतै; ३-ग. होऊँगा ।

⊙ यह पद 'ख' प्रति में इस प्रकार है:—

आजि कालि करता रें पूता ।

काया करै कलाल की भाठी ॥

सति सति भापंत माता मैणावंती ।

यउ तन जलि बलि होइगा माठी ॥

४-ग. किसी; ५-ख बांच; ६. 'ख' में 'रे पूता' नहीं है;

७-ग. में 'भ्रमि भूलौ रे माया जी' है;

८-यह पद ख, प्रति में इस प्रकार है:—

मरउगे मरि जाउगे ।

मसाण होउगे छारं ॥

कलू राक परंतत चीन्ह हो पुत्र ।

ज्यूं उतरौ संसार भव पारं ॥

वृंण^१ हमकूं भात पुलावै ।
 कौण पपालै पाई ॥
 कहां^२ सूं मेरै मैड़ी मंदिर ।
 कहां तूं मैणावंती माई^३ ॥ ९ ॥ ८२ ॥
 धरती^४ तुमकूं^५ भात पुलावै ।
 गंग पपालै पाई ॥
 रूप विरष^६ तेरै मांडी^७ मंदिर ।
 धरि धरि मैणावंती माई ॥ १० ॥ ८३ ॥
 माता कै उपदेस करि ।
 तजिला देस वंगालं^८ ॥
 गोपीचंद गुरू कै सरणै ।
 भेटत भगा कालं^९ ॥ ११ ॥ ८४ ॥
 छाड़या राज पाठ परिछाड़या^{१०} ।
 छाड़या^{११} भोग विलासं^{१२} जी ।
 गोपीचंद धौला घर^{१३} सवहीं ।
 छाड़ि गह्या वनबासं^{१४} जी ॥ १२ ॥ ८५ ॥
 रांणीं सकल कन्यां सुत^{१५} सवहीं ।
 हाहाकार भईला ॥
 रावत रैति तुरो गज गल बल ।
 राजा गोपीचंद कहां गईला ॥ १३ ॥ ८६ ॥
 जलंध्री पाव हाथि दे डीवी ।
 गोपीचंद पंदाया जी^{१६} ॥

१—ख. में कौण; २—ख. में 'सु'; ३—ग में 'जी' अधिक;
 ४—ग. अलख ५—ख. मुझ कौं; ६—ग. विरषे ७—ख. मैड़ी
 ८—६. में 'जो' पाठ अधिक है; १०—ख. परिछाड़ा;
 ११—ख. छाड़ा; १२—ख. बिसं; १३—ख. धौलागिरि
 १४—ग. में 'जी' अधिक ।
 १५—ग. में 'सुत' नहीं है; १६—ख. में 'गोपीचंद' पठाया;

मंदिर महल पौलि जहाँ^१ भीतरि ।
 तहाँ अलेश जगाया जी^२ ॥ १४ ॥ ८७ ॥
 भाइ वहन करि भिष्या मांगी ।
 पूरथा सींगों नादं जी^३ ॥
 सांभलि साद मिलि सब रांणी ।
 आइ किया संवादं जी^४ ॥ १५ ॥ ८८ ॥

राजा राणी संवाद

रांणी बोलै बाहुड़ी ।
 राजा गोपीचंद ॥
 जोग छाड़ि किन भोगवो ।
 राज सहित आनन्द ॥ १ ॥ ८९ ॥
 भोग न भावै भामिनी ।
 लागत रोग समान ॥
 जोग तजत हीं होत है ।
 उभै लोक अपमान ॥ २ ॥ ९० ॥
 मरदन तेल फुलेल सौ ।
 मंजन तातै नीर ॥
 अत्र तुम्ह कल कैसें परै ।
 लावहु भसम सरीर ॥ ३ ॥ ९१ ॥
 तेल फुलेल सनेह अति ।
 अलप पुरिस स्युं नित्त ॥
 तत हरि तत बिचारतां ।
 आत्म मन पवित्त ॥ ४ ॥ ९२ ॥
 मन रुचि भोजन भुगतते ।
 मेवा पांन कपूर ॥
 अत्र रूपै सूषै करत हौ ।
 नाथ पिटरका पूरि ॥ ५ ॥ ९३ ॥

१-ग. जहाँ; २-ख. में 'जी' नहीं; ३-४-ख. में 'जी' नहीं है ।

भावरि भोजन जोग की ।
 असो भोग न और ॥
 इजा रख्या प्राण करी ।
 विंजन वासी कर ॥ ६ ॥ ९४ ॥
 सीतल जल तुम्ह अंचवते ।
 उजल अमल अवेझ ॥
 अब कहुँ जौ नीर मिलि ।
 उसन कि मलिन असोझ ॥ ७ ॥ ९५ ॥
 अह निसि भूलै आत्मां ।
 अमी सरोवर मांहि ॥
 तीरथ गंगा आदि जल ।
 तिन तनि वृषा बुभाहि ॥ ८ ॥ ९६ ॥
 रतन जटित पर सेज परि ।
 करते सदा विलास ॥
 दंपति संपति छाड़ि अब ।
 घर परि रहै उदास ॥ ९ ॥ ९७ ॥
 सेज सबद गुरदेव के ।
 व्यौरन विवधि विलास ॥
 बनिता बुधि स्वासा विभै ।
 संचत सुपद आस ॥ १० ॥ ९८ ॥
 मन मैं मढ़ी बनाइ करि ।
 इहाँ रहौ तुम राज ॥
 नित प्रति हम सेवा करै ।
 छाड़ि सकल कुल लाज ॥ ११ ॥ ९९ ॥
 मुकति मढ़ी मैं हम रहै ।
 सेवग सुर नर और ॥
 जोगी जन रमते भले ।
 रवै न एकै ठौर ॥ १२ ॥ १०० ॥
 सतगुर शबद हमारा सिर परि ।
 बाद विवाद न कीजै ॥

हम जोगी परदेसी माई ।
 भिङ्ग्या होइ त दीजै ॥ १३ ॥ १०१ ॥
 काम विसरि अरु क्रोध तजीला ।
 मोह छाड़ि निरदंद ॥
 माया ममिता बिना गुर सरनै ।
 निरभै गोपीचंद ॥ १४ ॥ १०२ ॥
 एकंत का वासा अलख उपासा ।
 पेघंत परम उजासा ॥
 गोपीचंद गहन मन जपिवा ।
 सोहं साधंत स्वासा ॥ १५ ॥ १०३ ॥
 इडा आराधिये प्यंगुला प्रमोधिये ।
 सुपमनां सोधि उभै थीरं ॥
 सहश्र दल साधिए अलप अराधिए ।
 रुधिर पलटि फिरि पीर नीरं ॥ १६ ॥ १०४ ॥
 पवन कूँ प्रेरिवा पछिम दिसि फेरिवा ।
 अपांन प्राण कौँ उलटि मेलै ॥
 नाद गगनैँ बहै व्यंद अस्थिर रहै ।
 जोग करि जनम नहीं गमै हेलै ॥ १७ ॥ १०५ ॥
 पवन थिरं तां मन थिर ।
 मन थिरं तां व्यंद ॥
 व्यंद थिरंतां कंध थिर ।
 यौँ भाषंत गोपीचंद ॥ १८ ॥ * १०६ ॥
 मन राजा मन प्रजा ।
 मन सयल' का बंध^२ ॥

*यह पद ग. प्रति में इस प्रकार है:—

मन थिरं ता पवन थिर ।

पवन थिरंता बिंद ॥

बिंद थिरंता जिंद थिर ।

यूँ भाषे गोपीचंद ॥

१-ग. सकल; २-ग. में 'जी' अधिक

मन कूं चीन्हि^१ पारग्रांमीं भये^२ ।
 राजा^३ गोपीचंद^४ ॥ १९ ॥ १०७ ॥
 ग्रहिवा कूं नांही देषिवा कै लछि ।
 चंद सूर विवरजित पछि ॥
 जल मैं व्यंघ दरपन छाया ।
 अच्यंत पद गोपीचंद गाया ॥ २० + ॥ १०८ ॥
 पाया लो भल पाया लो ।
 सरव थान सहेती थिति ॥
 रूप सहेती दीसण लागा ।
 पिंड भइ प्रतिति ॥ २१ ॥ १०९ ॥
 मन चलंता पवन चलै ।
 पवन चलंता विंद ॥
 विंद चलंता कंध पड़ै ।
 यूँ भापै गोपीचंद ॥ २२ ॥ ११० ॥*

१-ग. चीन्हे; २-ग. भया; ३-ख. जारा; ४-ग. में 'जा' अधिक ।

+ यह पद ग में इस प्रकार है:—

ग्रहिबे कूं नाहीं देषिबे कूं लपि ।
 चंद सूर बिब रजित पपि ।
 जल मैं बिब द्रपन मैं छाया ।
 असा अचित पद गोपीचंद गाया ।

*ख प्रति में 'गोपीचंद की सबदी' में कुल ३५ पद हैं । 'ग' में केवल १९ ही हैं । इस पृष्ठ के दो पद 'ख' प्रति में नहीं हैं । 'ख' के शेष १७ पद 'ग' में भी मिलते हैं । ख और ग प्रतियों में पदों का क्रमान्तर है, तथा अंतिम दो पद केवल 'ग' प्रति में ।

गोपीचन्द जी का पद संवाद

राग रामग्री^१

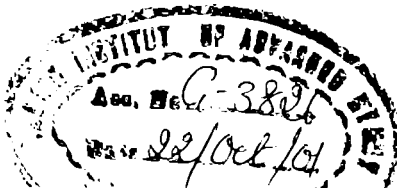
बाहुड़ौ ने बाहुड़ौ गोपीचंद राजा ।
 बहुड़ि धौलाघर आवोजी ॥
 यंछ्या नैं भोजन मन चिंत्या हो राजा ।
 भाव भगति सूं पावोजी ॥ टेक ॥ १११ ॥
 पलिक निद्रा नावै रे रांणी ।
 माह्वै मनि राज न आवै जी ॥
 जोग जुगति नौं राज हम्हारे ।
 अविचल कैसूं थावै जी ॥ १ ॥ ११२ ॥
 अगर चंदन नीं मढ़ी बधाऊं ।
 सोना नां तुम्ह नैं तुंव जी ॥
 कहौ तौ रूपानां पत्र घड़ाऊं ।
 सोनां नां सींगी नादं जी ॥ २ ॥ ११३ ॥
 गगन मंडल मैं मढ़ी हमारी ।
 चंद सूर ना तूवं जी ॥
 सहज सील नां पत्र हमारे ।
 अनहद सींगी नादं जी ॥ ३ ॥ ११४ ॥
 कूर कपूर तुम्हें जिमता हो राजा ।
 भगरड़ी भास्ये जी ॥
 ऊपरि पानं नां बीड़ा आरोगता ।
 वेली ना पानं किम पास्ये.....जी ॥ ४ ॥
 कूर कपूर माह्वे सास उसासं ।
 भुरकट अंम्रित प्यालं जी ॥
 ग्यानं ध्यानं नां पानं हमारे ।
 सबुधि षमियाँ पालं जी ॥ ५ ॥ ११६ ॥
 सौड़ि तुलाई तुम्हें पौढ़ता हो राजा ।
 साथ रड़ै किम स्वैस्थौ जी ॥

१. केवल 'क' प्रति में ।

गोद सिरहाएँ नैं सब दिसि सेवग ।
 पपरडै किम घास्यौ जी ॥ ६ ॥ ११७ ॥
 साथर स्वैस्यां नैं खपरि खाइस्यां ।
 ईंट उसीसै देस्यां जी सौड़ि तुलाई मा सतगुर वाणी ।
 भूमी सेज्या करिस्यां जी ॥ ७ ॥ ११८ ॥
 कौण तुम्हारा राजा चरन पषालिस्थे ।
 कौण करै तत वातैं जी ॥
 कौण तुम्हारी सेज या थरिस्थे ।
 कौण पुर विस्थे भातं जी ॥ ८ ॥ ११९ ॥
 गंगा हमारा राणीं चरण पषालिस्थै ।
 मनसा करै तत वातं जी ॥
 कंथा हमारी सेज पाथरिस्थे ।
 अलष पुरविस्थे भातं जी ॥ ९ ॥ १२० ॥
 सोला सै राणीं नैं वार सै कन्यां ।
 तिन्हौं निसासडौ पड़ि ज्यौ जी ॥
 जिणि भा राजा नौ राज छुड़ियौ ।
 ते तौ जोगी मरि ज्यौ जी ॥ १० ॥ १२१ ॥
 जलंध्री प्रसादैं जती गोपीचंद बोल्या ।
 गुरनैं गालि न दीज्यौ जी ॥
 सतगुर म्हारा मस्तक ऊपरि ।
 और भले रड़ा कीजै जी ॥ ११ ॥ १२२ ॥

× × ×

कहै राजा गोपीचंद सुनौं री घाई ।
 सतकी भिष्या देस्यौ मैणावती माई ॥ टेक ॥
 बाट घाट की थेगली ।
 मेरे पाट पटोला ॥
 मसांण की ठीकरी थाल कचोला ॥ १ ॥
 टूटी फाटी कंथा मैं फिरूं उदासा ॥ १२३ ॥
 लूषा सूका टूक रूपे विरषे बासा ॥ २ ॥
 धरणि पालेंग्यड़ा साथरि सेजं ।
 परबति मठली भोगि सुरेजं ॥ ३ ॥ १२४ ॥



तजीला वंगाल देस मैणावती माई ।
जलंध्रो प्रसादें गोपीचंदि चौपदी गाई ॥ ४ ॥ १२५ ॥

घोड़ा चौली जी की सवदी

श्री गोरखनाथ पंथ का भेव ।
अनंत सिधां मिलि पायौ भेव ॥
पाया भेव भई प्रतीत ।
अनंत सिधां में गोरख अतीत ॥ १ ॥ १२६ ॥
रावल ते जे चालै रांही ।
उलटी लहर समंद्र समांही ॥
पंच तत का जानै भेव ।
ते तौ रावल प्रत्तापि देव ॥ २ ॥ १२७ ॥
पांगल तेजे प्रकीरति गालै ।
अहनिस ब्रह्म अगनि प्रजालै ।
प्रजालै अगनि लगावै बंध ।
काया अजरवर कै कंध ॥ ३ ॥ १२८ ॥
वनखंडी तेजे वन बंध में रहै ।
सुनि निरालंब वारता कहै ॥
घड़ी न मनसा आसा पास ।
ते वन बंध में रहै उदास ॥ ४ ॥ १२९ ॥
अगमागम कै रते गम ।
अहनिस काया राषै दम ॥
नाद बिंद का जाणै भेव ।
अगमांगम करै ते देव ॥ ५ ॥ १३० ॥
आई पंथि में जे अनभै करै ।
उलटा बाण गगन कूं धरै ॥
उलट बजाई बेध्या भूरा ।

सिंध बाल गुसाई^१ साध्या जूरा ॥ ६ ॥ १३१ ॥
 पंषि सुंनि निरालंत्र देवै अंष ।
 प्रंम सुंनि मै जोति असंप ॥
 वेध्या हीरा मांणिक पाया ।
 तौ तव पंरु पंथ मै आया ॥ ७ ॥ १३२ ॥
 धूज ते धजा कूं जांणै ।
 उलटा पवन गगन कूं तांणै ।
 अहनिस नाद वजावै धीनां ।
 तेई धूज धजा सूं लीनां ॥ ८ ॥ १३३ ॥
 गोपाल ते जे बंचै काल ।
 अहनिस अनभै जीत्या व्याल ॥
 काम क्रोध मेटै विद्ध की माया ।
 ते गोपाल नाथ की काया ॥ ९ ॥ १३४ ॥
 बोलंत सिध [घोड़ा चोली ।
 हमें षत्री षेत्र का सूरा ॥
 गगन मंडल मै रहनि हमारी ।
 बाजै अनहद तूरा ॥ १० ॥ १३५ ॥
 हणवंत^२ पैसि रामायण कीता ।
 दससिर छेदि षहौड़ी सीतां ॥
 सारा सेत तहां बंध्या पांणी ।
 दस सिर छेदि लच्छि घर आंणी ॥ ११ ॥ १३६ ॥
 गोरख ते जे राधे गोई ।
 माया मनसा करै न मोही ॥
 सदा अकलपत रहै उदासा ।
 परचै जोगी सिंभ निवासा ॥ १२ ॥ १३७ ॥
 जोग आरंभ भए सिधा ।
 द्वादस हंसा ग्यानहि विधा ॥

१. ग—गुदाई ।

२. ग—हिणवंत ।

सोहं सोहं सास उसासं ।
 घोलै घोड़ा चोली मछिंद्र का दासं ॥ १३ ॥ १३८ ॥
 अचिंत पुराणं गगन गरास ।
 घोलै घोड़ा चोली मछिंद्र का दास ॥
 अचिंत फुरै हाक्यौ न आवै ।
 तव घोड़ा चोली कहां तूं पावै ॥ १४ ॥ १३९ ॥
 नप सप पूरि रही जे पवनां ।
 आयो है दूध भात पाइगो कवनां ॥
 पुध्या की अगनि मिटाई काल ।
 चौष्टि संधि पवन की माल ॥ १५ ॥ १४० ॥
 मेर डंड का गागरि बंध ।
 वाई घोलै चौष्टि संधि ॥
 अमरा मरै कालु कै डंस ।
 न पडै काया न उडै हंस ॥ १६ ॥ १४१ ॥

श्री चरपटनाथ जी की सबदी

किसका बेटा किसकी बहू ।
 आप सवारथ मिलिया सहू ॥
 जेता फूला तेता काल ।
 चरपट कहै ए संऊआल जंजाल ॥ १ ॥ १४२ ॥
 काया तरवर माकड़ चित्त ।^१
 डालै पानै^२ भरमै नित्त नित्त ॥
 कलपै कलपै दह दिसि जाइ ।
 तिस कारण कोई सिध नथाइ ॥ २ ॥ १४३ ॥
 ढील कछोटो मन भंग फिरै ।
 घरि घरि नैन पसारा करै ॥
 षाया जरै न बाचा फुरै^३ ।
 ता कारणि भुंहु करि करि^४ मरै ॥ ३ ॥ १४४ ॥
 श्रवधू राती कंथारै पटरोल ।
 पगे पावड़ी मुपि तंबोल ॥
 षाजै पीजै कीजै भोग ।
 चरपट कहै बिगोवै जोग^५ ॥ ४ ॥ १४५ ॥
 एक सेत पटा एक नील पटा ।
 एक टसर कंटीला^६ लांज जटा ॥
 पंथ छाड़ि मन उबट बटा ।
 चरपट कहै ये पेट नटा ॥ ५ ॥ १४६ ॥

१-यह पद ग में नहीं है; २-ग पातै; ३-ग फरै; ४-क कुरि कुरि;
 ५-पाठान्तर ग प्रति ।

राती कंथा रा पटरोल ।
 पग पावड़ी मुपा तंबोलै ॥
 षाजै पीजै कीजै भोग ।
 चरपट कहै बिगाडया जोग ॥

६-ग कै टीका ।

टीका टामां टम कली ।
 वोलेँ मधुरी बांणी ॥
 कहैँ चरपट सुणि हो नागा अरजन ।
 ए सौरां की सहनांणी ॥ ६ ॥ १४७ ॥
 वाकर कूकर किंगर^१ हाथ ।
 वाली भोली तरणीं साथ ॥
 दिन कर भिष्या रात्यूं भोग ।
 चरपट कहैँ विगोवैँ जोग ॥ ७ ॥ १४८ ॥
 नाथ कहावैँ सकैँ न नाथि ।
 चेला पंच चलावैँ साथि ॥
 मागैँ भिष्या भरि भरि पांहि^२ ।
 नाथ कहावैँ मरि मरि जांहि ॥ ८ ॥ १४९ ॥
 कानैँ मुद्रा गलि रुद्राप ।
 फिरि फिरि मांगैँ निपजी^३ साथ ॥
 चरपट कहैँ सुणौँ रे लोइ ।
 बरतणि दैँ पणि जोग न होइ ॥ ९ ॥ १५० ॥
 रंगा चंगा बहु^४ दीदारी ।
 जैसी पोती भुहर मुलमाधारी ॥
 चरपट कहैँ सुणौँ रे लोइ ।
 ये पापंड हैँ पणि जोग न होई^५ ॥ १० ॥ १५१ ॥
 पहरि मूंदड़ी कंकन हाथि ।
 नकटी बूची जोगणि साथि ॥
 ऊठत बैठत काकण कार ।
 तजि न सख्या माया जंजार^६ ॥ ११ ॥ १५२ ॥
 जटा बिटंबन आंगैँ छार ।
 मोटी कंथा बहु^७ बिस्तार ॥

१-ग. कँगुरा किंगर; २-ग. पाइ, ३-क. निपनी; ४-ग. बहो;

५-पाठान्तर ग प्रति:—

बरतण छैँ पणि जोग न होई ।

६-क. जाल, ख. जार; ७-ग. बहो;

विचित्र^१ बांनी अंग चंगा ।
 वटवा^२ सीवै बहु विध रंगा ॥ १२ ॥ १५३ ॥
 मान अभिमान लादै फिरै ।
 गुरू न षोर्जे मूरिष मरै ॥
 डंड कमंडल भगवां भेस ।
 पाथर पूजा बहु उपदेस ॥ १३ ॥ १५४ ॥
 जीव हतै अरु पूजा करै ।
 जंत्र मंत्र ले हिरदै^३ धरै ॥
 तीरथ जाइ करै अस्नान ।
 बोलै चरपट पंडित ग्यान^४ ॥ १४ ॥ १५५ ॥
 न्हावै धोवै पपालै अंग ।
 भीतरि मैला वाहरि चंग ॥
 होम जाप इग्यारी करै ।
 पारब्रह्म के सुध न धरै ॥ १५ ॥ १५६ ॥
 दिन दिन हत्या करै अपार ।
 सूत गया तिग ले लै मार ॥
 ब्रह्मा रूप ठग्या संसार ।
 चरपट कहै यहु धूत विचार ॥ १६ ॥ १५७ ॥
 गंध^५ विगंधा^६ मूता^७ बांड ।
 पड़ि पड़ि तसवा^८ तोडै हाड ॥
 वंच न सक्या^९ आंगुल च्यारि ।
 चरपट कहै ते माथै मारि ॥ १७ ॥ १५८ ॥
 जल की भीति पवन का थंभा ।
 देवल देवि^{१०} भया अचंभा ॥
 बाहरि भीतरि गंध विगंधा ।

१-२-ख. प्रति में इस प्रकार है:—

विचित्र कथा भचला चंगा ।

बटवांसी वै बहु रंगा ॥

३-क. ले मन में धरै; ४-ख. जान ।

५-ख. बजा; ६-ग. गंग; ७-ख. विंधा; ८-ग. पसुवा पड़ि पड़ि;

९-ग. ज्याह न बंची; १०-ग. देणपर;

काहै भूलै पसुआ^१ अंधा ॥ १८ ॥ १५९ ॥
 चरपट कहै सुणौ रे अरवधू ।
 कांमणि संग न कीजै ॥^२
 जिंद विंद नौ नाडी सोषै ।
 दिन दिन काया छीजै ॥ १९ ॥ १६० ॥
 आंघि की टगटगी-नाक की डंडी ।
 अहार की कोथली^३ नरक की कुंडी ॥
 मन का वासा तहाँ^४ मास का लूचा ।
 सिष्टि का छार तहां केस का कूचा^५ ॥ २० ॥ १६१ ॥
 गंध विगंध जहाँ चार विचारी ।
 चरपट चाल्यौ मात जुहारी ॥ २१ ॥ १६२ ॥
 जतन करंता जाइ सुजानु^६ ।
 भग देषि न घालै धानु^७ ॥
 कोटि घरस लू वादें^८ तुम्हारी आव ।
 सत सत भापंत श्री चरपट राव ॥ २२ ॥ १६३ ॥
 साधु कहावैं भुगते भग ।
 ताका काला मुप पीला पग ॥
 कूटै चमड़ी धरै धियान ।
 ता पसुवा में कहा गियान ॥ २३ ॥ १६४ ॥
 फोकट फाकट कथै गियान ।
 कूटैं चमड़ी धरे धियान ॥
 सिध पुरिस स्युं करै उपाधि^९ ।
 चरपट कहैं ये कलिजुग का बाद^९ ॥ २४ ॥ १६५ ॥

१-ग. पसवा; २-ख. में "तहां" अधिक; ३-ख. जहां; ४-ग. में
 पाठान्तर:—

आंघि को टगटगी नाक की डंडी ।
 चाम की चंद्रीवा रूथू सू मांडी ॥
 मल प्रसेद सुरति जहां सूदा ।
 अहार की कोथली नरक का कूंडा ॥

५-ग. सुजाइ; ६-ग. घाव; ७-ख. बघै; ८-ग. उपाधि; ९-ग. बादी ।

बामें हाथि कमंडल ।
 दाहिणें हाथ डंडा ॥
 मांडौं चक्र पूजौं कै भंडा ।
 वै वौ उझे मुंह आगैं रंडा ॥
 चरपट कहै ये सबै पाषंडा ॥ २५ ॥ + १६६ ॥
 मंदै मासे लावै चीत ।
 ग्यान विवरजित गावै गीत ॥
 अहनिसि भोग बिलास^१ ।
 चरपट बोलै कंध विणासं ॥ २६ ॥ १६७ ॥
 दया धरम सत चित न बसै ।
 अतीत देषि निंघा मनि हसै ॥
 कथै गियान अरु फोकट रहण ।
 चरपट कहै कलू का चिहन ॥ २७ ॥ १६८ ॥
 जिसका मति सही कू छाजै ।
 और करै तौ डोंगा बाजै ॥
 चरपट कहै यहु आचिर्ज^२ देष ।
 कनक कामिनी पाया भेष ॥ २८ ॥ १६९ ॥
 फोकट आवै फोकट जाइ ।
 फोकट बोलै फोकट थाइ ॥
 फोकट बैटा करै विवाद ॥
 चरपट कहै ये सबै उपाध ॥ २९ ॥ १७० ॥
 पगे चमांऊं माथै टोप ।
 गल में बागा मन में कोप ॥
 माया देषि पसारा करं ।
 चरपट कहै अणपूटी मरै ॥ ३० ॥ १७१ ॥
 जौ तूं रावल घरा सियांना ।
 कसि किनि^३ बाँधै टाटीं ॥
 वारह आंगुल पैसि गई है ।
 सोलह आंगुल फाटी ॥ ३१ ॥ १७२ ॥

+ चिह्न अंकित अर्थात् २५ वां पद क प्रति में नहीं है;

१-ख. बिलासं । १-क. हसि किनि,

झोली मोली पाई पत्र पाया ।
 पाया पंथ का भेव ॥
 रीता जाऊं भन्या आऊं ।
 कहा करै^१ गुर देव ॥ ३२ ॥ १७३ ॥
 हंसना योगी रिंगनी सांठि ।
 पुरिष कुलपणै घसा नाटि ॥
 कवि लजालू नीलज नारि ।
 चरपट कहै ते माथै मारि ॥ ३३ ॥ १७४ ॥
 बजर कछौटी^२ चावै पान ।
 तीरथि जाइ उगाहै दान^३ ॥
 करै वैदगी ज्यावै रोगी ।
 चरपट कहै ते^४ विगूता जोगी ॥ ३४ ॥ १७५ ॥
 आई^५ न छोड़ौ लैन न जाऊं^६ ।
 तार्थी^७ मेरा चरपट नांऊ ॥
 आई भी छोड़िये लैन^८ न जाइये ।
 कुहै गोरष पूता विचारि विचारि पाईये ॥ ३५ ॥ १७६ ॥
 टूका^९ पाया मगर मचाया ।
 जैसा सहर का कूता ॥
 जोग जुगति की पवरि न जांणी ।
 कान फड़ाइ विगता ॥ ३६ ॥ १७७ ॥
 जोग न जोग्या^{१०} भोग न भोग्या,
 अहिला गया जमारं ।
 ग्रामे गदहा रामै सुकर ।
 फिरि फिरि ले अवतारं ॥ ३७ ॥ १७८ ॥
 रूप विरष गिर कंदलि बास ।
 अह निसि^{१०} रहिया जोग अभ्यास ॥

१-क. इव कहा करै । २-ख. बजू कछोटी ३-क. दाम; ४-क. में 'त्ते'
 नहीं है । ५-ख. लीन न जान; ६-ख. तिस कारणि; ७-ख. लीन न जाइये;
 ८-ख. टका; ९-ख. भोग्या । १०-क. इहि विधि;

पलटै काया षंडै^१ रोग
 चरपट कहै धनि धनि^२ जोग ॥ ३८ ॥ १७९ ॥
 अवधू मूल दुवारै बंद^३ लगाइ ।
 पवन पलटै गगन^४ समाइ ॥
 नादा बिंद दोउ असथिर होइ ।
 अट्टि पुरिष टिट्टि तत्र जोइ ॥ ३९ ॥ १८० ॥
 पवनी कंथा अनलै वास ।
 पिसण न कोई आवै पास ॥
 मन सूँ मतै^५ न ग्यांन सूँ गूभ^६ ।
 चरपट कहै धनि अवधूत ॥ ४० ॥ १८१ ॥
 निरभै निसंक तत वेता ।
 मन मानि विवर्जित इन्द्री जिता ॥
 ग्यांन^७ सेल फटक मन रता ।
 चरपट कहै ये सिध मता ॥ ४१ ॥ १८२ ॥
 करतलि भिष्पा विरप तलि वास ।
 दोइ जन अंग न मेलै पास ॥
 वन पंडि रहे मसाणें भूत^८ ।
 चरपट कहै ते अवधूत ॥ ४२ ॥ १८३ ॥
 चिरकट चीर चंक^९ मन कंथा ।
 चित्त चमाऊं करणां ॥
 औसी करणी करौ रे अवधू ।
 ज्यूँ घहुरि न होइ मरणां ॥ ४३ ॥ १८४ ॥
 अवधू मूल दुवारै लावै बंध ।
 बाई पैलै चौसठि संघ ॥
 जुग पलटै षंडै रोग ।
 बोलै चरपट धनि धनि जोग ॥ ४४ ॥ १८५ ॥
 मारौ भूषरु साधौ निंद ।
 सुपिनै जाता रापौ बिंद ॥

१-क. छटै; २-क. धनि धनि ते; ३-ग. बंध; ४-क. गंध; ५-ख.
 मतौने; ६-ख. गलै; ७-ख-ग. में 'ग्यांन' नहीं है; ८-क. में 'रहे' है ।
 ९-क. द्विद;

जुरा पलटै षडै रोग ।
 चरपट कहै धनि यहु जोग ॥ ४५ ॥ १८६ ॥
 बंधसि बंध विषम करि बंध ।
 तलि करि रवि ऊपरि करे चंदा ॥
 रैणि दिवस रस चरपट पीया ।
 पूटै तेल न बूझै दीया ॥ ४६ ॥ १८७ ॥
 थिर करि मनवां त्रिद^१ कर चित ।
 काया पवन पषालै नित ॥
 अमरा भरौ ज्युं थिरवै कंध^२ ।
 न षडै हंसा न पडै जिद ॥ ४७ ॥ १८८ ॥
 कथनी बदनी बलि करि जाव ।
 बंधि सकहु तौ बंधौ बाव ॥
 चरपट कहै पवन की डोर ।
 भूंकत गदहा ले गयौ चोर ॥ ४८ ॥ १८९ ॥
 मुंजली कंधा षगड़ी वास ।
 कांमिनि अंग न लावै पास ॥
 त्रिद करि राषौ पांचौ इन्द्र ।
 चरपट बोले ते जोग्यन्द्र ॥ ४९ ॥ १९० ॥
 मन नहीं मूडै मूडै केस ।
 केसां मूड्या क्या उपदेस ॥
 मूडै नहीं मन मरदक मान^३ ।
 चरपट बोलै तत गियान ॥ ५० ॥ १९१ ॥
 मन चंचल पवन चंचल^४ ।
 चंचल बाई की धारा ।
 इहि घट मध्ये तीन्युं चंचल ।
 क्युं राषसि^५ झरता व्यंद का द्वारा ॥ ५१ ॥ १९२ ॥

१-क. थिर; २-क. कंद । ३-क. कांम न; ४-क. बोलै चरपट;
 ५-क. में 'मन चंचल पवन; ६-क. रपिसे;

भरथर चरपट गोपीचंद ।
 विंदौ आत्मा परमानंद ॥
 छांडौ पीर पांड बहु भोग ।
 राषो आत्मा साधौ जोग^१ ॥ ५२ ॥ १९३ ॥
 नां घरि त्रिया ना पर त्रिया रता ।
 ना घरि धन न जोवन मता ॥
 ना घरि पुत्र न धीय कंवारी ।
 ताथै चरपट नोंद पियारी ॥ ५३^२ ॥ १९४ ॥
 एका गूंडा^३ ऊपरि पाव ।
 दूजा गूंडा ऊपरि भाव ॥
 तीजा आगौ वाजै तूरा ।
 चरपट कहै बिगोवा पूरा ॥ ५४ ॥ १९५ ॥
 पूजि पूजि भाठा सब जग घाटा ।
 निज तत रह्या^४ निरालं ॥
 जोति सरूपी संग ही आछै ।
 ताका^५ करौ विचारं ॥ ५५ ॥ १९६ ॥
 तांवा तूवा ये दोइ सूचा ।
 राजा ही तैं जोगी ऊचा ॥
 तांवा हूचै तूवा तिरै ।
 जीवै जोगी राजा मरै ॥ ५६ ॥ १९७ ॥
 दरसन पहिर कहावै नाथ ।
 मुपि वोलेँ चतुराई ॥
 आलै धांसै ब्यूँ घुण लागा ।
 डाल मूल पणि पाई ॥ ५७^६ ॥ १९८ ॥

१-क. में यह पंक्ति ऐसी है:—

जोग न जोग्या भोग न भोग;

२-यह पूरा पद क. में नहीं है;

३-ख. में गूंडा; ४-ख. रह गया ५. क तिसका ।

६—यह पूरा पद 'क' में नहीं है ।

नाड़े ढोड़े पाड़े धरम ।
 ऊंचा मंदिर कूंडा करम
 चरपट कहै सुणौं रे लोक ।
 रतन पदारथ गंवाया फोक ॥ ५८ ॥ १९९ ॥
 चांम की कोथली चाम का सूवा ।
 तास की प्रीति करि जगत सब मूवा ॥
 देव गंध्रप मुनि मानवां जेता ।
 उवर्या एक को गुरमुपि चेता ॥ ५९ ॥ २०० ॥

चरपटनाथ जी के श्लोक

इक पीत पटा इक लम्ब जटा ।
 इक सूत जनेऊ तिलक टटा ।
 इक जंगम कहीए भसम छटा ।
 जउलउ नहीं चीनै उलटि घटा ।
 तब चरपट सगले स्वांग नटा ॥ २०१ ॥
 मूसेकंनी बहु फल दूढंब दूढब जाय ।
 पानी सोपै कलीका चरपट वैठा खाय ॥ २०२ ॥
 पंज सिरसाही गंधक लेहु ।
 पारा सिरसाही तिन्न लेहु ॥
 इक तोला गोरोचन पावै ।
 चार दूध तिहं मांहि खपावै ॥
 दूध दूध का क्या क्या नांऊ ।
 चरपट इह विधि कहै सुभाऊ ॥ २०३ ॥
 जब सेर अढाई दूध खपाइ ।
 तब हीया में तत्त समाय ॥
 बकरी उठनी गाय अरु भेड़ ।
 सतिगुर सहज बताई खेड ॥
 चार दूध गंधक महि सुखाई ।
 तांके गुण क्या कहो सुनाई ॥
 सूखे करके शीशी पाय ।
 बालू यंत्र सौं तेल चुआय ॥

रत्ती तोला तांवा मैं देइ ।
 तत्तकाल कंचन करि लेइ ॥
 झोला होइ सु पेटहि खाय ।
 चरपट कहे रोग तव जाय ॥ २०४ ॥
 पारा इक सिरसाही लेहु ।
 सम हरताल सु तांमहि देहु ॥
 सुयन मकरखी सिरसाही मीत ।
 सम सिगरफ ले गुर परतीत ।
 सरसाही सुहागा सो देइ धमाल ।
 श्रम्वर वेल सो खरलहिं डाल ॥
 खरल करै जव वासर तीनि ।
 गर परसादी होय महीन ॥ २०५ ॥

६-चौरंगी नाथ

प्राण सांकली

अथ चौरंगी नाथ जो की प्राण सांकली लिष्यते ।

सत्य वदंत चौरंगी नाथ । आदि अंतरि सुनौ त्रितांत ।

साल वाहन घरे हमारा जनम उत्पति; सति मां भुट बोलीला ॥१॥२०६॥

ई अम्हारा भइला सासत; पाप कल्पना नहीं हमारे मने; हाथ पांव कटाय रलाइ लायला निरंजन वने, सोप संताप मने परभेव सनमुप देपीला श्री मछंद्रनाथ गुरुदेव; नमसकार करीला, नमाइला माथा ॥ २ ॥ २०७ ॥

आसीरवाद पाईला अम्हे, मने भइला हरपित, होठ कंठ तालूका रे सुकाईला, धर्म ना रूप मछंद्रनाथ स्वामी ॥ ३ ॥ २०८ ॥

मन जानै पुन्य पाप, वचन न आवै मुषै, बोलब्या कैसा, हाथ रे दीला फल, मुषे पीलीला, ऐसा गुसाईं बोलीला ॥ ४ ॥ २०९ ॥

जीवन उपदेस भाषिला, फल अम्हे विसारला, दोष बुध्या त्रिषा विसारिला ॥ ५ ॥ २१० ॥

नहीं मानै सोक धर धरम सुमिरला, अम्हे भइला सचेत, के तुम्ह काहारे बोले पुछीला ॥ ६ ॥ २११ ॥

अम्हे आदि अंत सुप दुष बोलीला, जवे दया उपजीला, गुसाईं मने तवे थिर हो चौरंगी तुम्हें आनमना न होइवा ॥ ७ ॥ २१२ ॥

अम्हारा वचन तुम्हें दिढ़ करि धरिवा, काम क्रोध दुष मने न थोइवा, ये भव नदी तुम्हे सहजे तिरवा, सुप दुष पडेरा प्रापति ॥ ८ ॥ २१३ ॥

सहजै उत्पति प्रलै सहजै निनारत निमील चितैनि सुलैभवै (?), थिर हौ चौरंगी तुम्हें, परम ध्याने जोग जुगति, सति जति क्रिया प्रमाण, सत गुरु वचने हित उपदेस त्रिथौ (त्रियो) अत्रि घोर पारं, गुसाईं वचने भईला दिढ़ बुध ॥ ९ ॥ २१४ ॥

भरमत जीया मन रहैला समोद, आसण वंध भेद मुद्रा जोग जुगत
रा बुभाईला भेव; पिंडे प्राणे परचो करलै, अम्हारा गुरु सिध मछिंद्र
नाथ देव ॥ १० ॥ २१५ ॥

अहार प्रीति पालन चीति, श्री गोरखनाथ कुस मुपला वारै वरप
अम्हारै निमित्ति आणि जोगला ॥ ११ ॥ २१६ ॥

ग्यान रा गुर अम्हारा सिध मछिंद्र नाथ, ता प्रसादै भईला पग
हाथ; त्रिभवने किरत थाकली अम्हारी अनदाता श्री गोरपनाथ ॥ १२ ॥
२१७ ॥

वारै वरप अम्है एक चित मने, तिरियै म्रित घोरपारं, दुतर तिरलो
अम्हे, सिध भईला काया ॥ ३ ॥ २१८ ॥

गोरपनाथ पुछीला अम्हे ते जीवन उपाया तहा कौन कथिला अम्हें
परम गुसाईं ॥ ४ ॥ २१९ ॥

तिह देपै पंछे सिष्यन भईला, अनंत सिधा आया, पर तिरला त्रिभ-
वने कीरत अम्हारी, अम्हे आपा नु धारीला ॥ १५ ॥ २२० ॥

मछंद्रनाथ गुरु अम्हारा, गोरपनाथ भाई, विवरी विचारी चौरंगी
आनमना न हो री ॥ १६ ॥ २२१ ॥

कहा कौं कथिवा कछु कथना न जाई, सिध संकेत वाणी विरला
हिरदै समाई; पिंडे प्राणे परचो संधान, गुरुमुष आये ले ज प्रमान
॥ १७ ॥ २२२ ॥

जे जन बुझिचै सो जन बुझै, तिसि पिंडरा होइ मोष्य मुक्ति; आपणा
रे दूष जाणवा पर दूष ॥ १८ ॥ २२३ ॥

सति सति भाषंत चौरंगीनाथ प्राण सांकली कथी विचारि अनंत
सिधा उतरीया पार। भव नदी प्यंड ब्रह्मांड करि जाँनी सिध संकेत अचं-
चल वाणी। अकथ कथा ते कही न जाई, सति सति वदंत चौरंगीनाथ,
विरला हिरदै समाई ॥ १९ ॥ २२४ ॥

वाहिर भीतर फीटला भ्रांति, ते पिंडे प्राणे होय मुक्त। प्राण सांकली
सरीर विचारं, अनंत सिधां तिरियौ मृत घोर पारं ॥ २० ॥ २२५ ॥

सत्य गुर मछंद्रनाथ प्रसादे अम्हारा फीटला भ्रांति। सत्य सत्य
भाषंत चौरंगीनाथ अनंत पिंडेरा होइ मुक्ति ॥ २१ ॥ २२६ ॥

एवं सरीरे आदिमेर, अष्ट कुल नाग, अष्ट पाताल, चतुर्दश भवन
॥ २२ ॥ २२७ ॥

सपत दीप, सपत सागर, सपत सलिता, सपत पाताल, सप्त सुर्ग,
पंच भूत ॥ २३ ॥ २२८ ॥

पचीस प्रकृति, पंच पेत्र, विहानवैँ सहस्र नदी, चौरासी लाप जीव
जोनि, च्यार पानीं, च्यार वांनी, चत्रुदस साख ॥ २४ ॥ २२९ ॥

सात वार, पंद्रै तिथि, सत्ताईस नष्टपत्र, नवग्रह ॥ २५ ॥ २३० ॥

वारह रासि, सर्व देव देवता, चतुर्जुग संख्या, इति सर्व संजोग्य उत-
पनी काया ॥ २६ ॥ २३१ ॥

वाहरि भीतर एक सतगुरु कथंता, सपुत्र श्रोता, कायारा विचार,
चौरासी पंड ग्यान ॥ २७ ॥ २३२ ॥

सवा लाप उपदेस, बाणवैँ लकख की राति दिन, सिव सकति, अष्ट
कुल परवत ॥ २८ ॥ २३३ ॥

सुर्ग मृत्य पाताल कूर्म तीन भवन व्यापक, अनेक नांव रूप काया
मध्ये ॥ २९ ॥ २३४ ॥

गुरु उपदेसैँ जालि (जि ?) वा तलयगा कौ (जलि पाताल या कौ ?)
तल पाताल बोलीयैँ । तल पाताल ऊपर नील तल वसैँ ॥ ३० ॥ २३५ ॥

नील तल ऊपर पगुगांउ गांउ वसैँ, तहाक सुतल बोलीयैँ पगुगांउ
गांउ ऊपर नली हाड़ वसैँ ॥ ३१ ॥ २३६ ॥

तहां कौ परतल बोलीयैँ, नली हाड़ ऊपरि चषप कुंडली वसैँ, चषप
कुंडली ऊपरि गंभीर नाल वसैँ ॥ ३२ ॥ २३७ ॥

तहां कौ तलीतल बोलीयैँ, गंभीर नाल ऊपर समकूहड़ वसैँ, तहां कौ
रसातल बोलीयैँ, समकूहड़ ऊपरि केसी सूत्र अस्थान वसैँ ॥ ३३ ॥ २३८ ॥

तहां कौ पाताल बोलीयैँ । एवं सरीरे सपत पाताल बोलीयैँ, सपत
पाताल ऊपरि पृथ्वी वसैँ, नाग कूर्म कुर्करो देवदत धनंजया ॥ ३४ ॥ २३९ ॥

ता मध्ये पंच प्राण, प्राण अपान समान उदांन व्यांन, ता मध्ये प्राण
कारण ॥ ४० ॥ २४० ॥

प्राण आछै लई सवै आछै, प्राण गैली सवै जाय; इह कौ अनेक गुरु उपदेसै जानियै ॥ ४६* ॥ २४१ ॥

पोटी ऊपर अंतरमाला बसै, तहां कौ अनंतमाया बोलीयै, ता ऊपर हिरदै कंवल बसै, हिरदै कंवल ऊपर हिरदै लिंग बसै, हिरदै लिंग ऊपर हंस बसै ॥ ४७ ॥ २४२ ॥

बसै, बर्तास हाड़ ऊपर जमघाटी बसै, जमघाटी ऊपरि चत्रकंठ बसै ॥ ४८ ॥ २४३ ॥

चत्रकंठ ऊपरि नीलकंठ बसै, चत्रनील कंठ मध्ये अर्क चितली देअवा तत्र नाद धुनि अस्थान बसै नाद धुनि अस्थान ऊपरि देवदत्त वायु बसै ॥ ४९ ॥ २४४ ॥

देवदत्त वायु ऊपरि जिभ्यामूल बसै, जिभ्यामूल कौ आदि अस्थान बोलीयै, इहकौ अर्धशक्ति बोलीयै ॥ ५० ॥ २४५ ॥

जिभ्या दिपणो पासै पइंकाल बसै, जिभ्या वामै पासै काल बसै, मध्य जिभ्या सति बसै, जिभ्या अग्रै स्वाद अस्थान बसै ॥ ५१ ॥ २४६ ॥

तल दंतपटी कौ सित्रचक्र बोलीयै, दोयपटी चांपिला वज्रावली बोलीयै, जिभ्या तलै गंगा जमना बसै ॥ ५२ ॥ २४७ ॥

तत्र जलयांनै अमृतवली बोलीयै, तहां कौ सीतल बोलीयै, जिभ्या ऊपर लंबका बसै, लंबका ऊपर घंटका बसै ॥ ५३ ॥ २४८ ॥

घंटका ऊपर तालुका बसै, तालका ऊपर गगन गंगा बसै, तहाँ होइ नाक वाट कान वाट चण्णवाट, इह कौ त्रिवेनी बोलीयै ॥ ५४ ॥ २४९ ॥

कर्न कौ अनहद पंथ बोलीयै, चण्ण को गगनदीप बोलीयै, नासिका कौ जमल संघ बोलीयै ॥ ५५ ॥ २५० ॥

नासिका का पवन मुललना बहै तो उजीणी बोलीयै, तहाँ कौ सुसंच सुप आरोग्य बोलीयै, मुललना बहै तो आन उजीणी बोलीयै, तहाँ कौ त्रिसंचि त्रिमै बोलीयै ॥ ५६ ॥ २५१ ॥

❁ मूल प्रति में ३४ के पश्चात् ४० और तत्पश्चात् ४६ क्रमांक दिया हुआ है जिसमें ज्ञात होता है कि बीच के कुछ पद्य छूट गए हैं ।

दाहनै वाहै तौ भुंजिवा, वामै वहै तो सोइवा, सक्ति मन वहै तो
वैसिवा, आतमा चितवनि छाडि आनं कौ न मन धरवा ॥५७॥२५२॥

इतना प्रकार का कलेवर संज्योग बोलीयै । एती साधक उलटि
जिभ्या अभ्यास करण वावां पट चाँपिला दहिण पुट वहै ॥५८॥२५३॥

दाहिणा पुट चाँपिला वामा पुट वहै, मध्या चाँपिला आवागमण
रहै, इह कौ काण्टी समाधि बोलीयै ॥ ५९ ॥ २५४ ॥

चंद्र अस्थान बुईला जागै, रवि अस्थान बुईला सोवै, इहकौ समा-
ध्यान बोलीयै । इह जोग अभ्यास बोलीयै ॥ ६० ॥ २५५ ॥

इहकौ समाधि सिध हठ जोग बोलीयै, इहकौ वज्रवली बोलीयै,
अर्ध ऊर्ध मधि निरोधनां कौ सिधावली बोलीयै ॥ ६१ ॥ २५६ ॥

चप्प कौ गिगन जोति बोलीयै, चप्प भीतर सुकुल पटी वसै, सुकुल
चप्प भीतर कृष्ण पटी वसै, तहां कौ नीलकांति मनि बोलीयै ॥ ६२ ॥
२५७ ॥

नीलकांति मणि भीतरि निर्मल जोति वसै, निरमल जोति भीतर
निरंजन पुतली वसै, निरंजन पुतली ऊपर निद्रा वसै, निद्रा ऊपर चन्द्र
वसै, चंद्र ऊपर सप्त सून्य ब्रह्मांड वसै, एते एते एक नाम अह्यान कौ पिंड
बोलीयै । सर्व मस्तग कौ सुर्ग बोलीयै, पिंडि ब्रह्मांड वसै ॥ ६३ ॥ २५८ ॥

परतर गुर स्थौ उपदेसै जानायै, पिंड अस्थान अंगुली अंतरै आकास
ब्रह्मांड वसै, आकास ब्रह्मांड अंगुली अंतरै परम सुन्य ब्रह्मांड
वसै ॥ ६४ ॥ २५९ ॥

सुन्य ब्रह्मांड अंगुली अंतरै निरंजन ब्रह्मांड वसै, निरंजन ब्रह्मांड
अंगुली अंतरै निरंतर ब्रह्मांड वसै, इति सप्त ब्रह्मांड बोलीयै ॥६५॥२६०॥

सप्त ब्रह्मांड ऊपर पर परम सून्य निरालंबन अस्थान वसै, तहांको
सिव भवन बोलीयै, तहांकौ अनूपम बोलीयै ॥ ६६ ॥ २६१ ॥

पूर्व भागे उदैगिर वसै, पछिम भागे अस्तगिर वसै, वाइव कूणै हेम
गिर वसै, नैरति कूणै कनेर गिर वसे ॥ ६७ ॥ २६२ ॥

ईसान कूणै माहेन्द्र गिर वसै, अग्नि कूणै पुन्ये गिर वसै, दिष्पन
कूणै बनचाल गिर वसै, उतर कोणै कवलास गिर वसै ॥ ६८ ॥ २६३ ॥

इति सररी अष्ट गिर वसै अष्ट गिर मध्ये अलंक छत्र वसै, अलंक छत्र मध्ये गहन गंभीर सरोवर वसै, तिहकौ गहन गंभीर समुद्र बोलीयै ॥ ६९ ॥ २६४ ॥

तहाँ कौ गगन गंगा बोलीयै तहाँकौ अमर अस्थान बोलीयै तहाँकौ अमृत कुंड बोलीयै तहाँकौ मान सरोवर बोलीयै ॥ ७० ॥ २६५ ॥

ते गहन गंभीर सरोवर मध्ये सहस्र दल कंबल मध्ये परमहंस वसै ते स्वयं बोध क्रीड़ा आनंद आछै ॥ ७१ ॥ २६६ ॥

तहां कौ परम ध्यान बोलीयै, तहाँको आतमा चेतन बोलीयै, ए ध्यान चितने पापक्षय होय ॥ ७२ ॥ २६७ ॥

पाप पुन्य विवर्जित सिध संकेत गुरु उपदेशै जानीयै, एते एक पिंड ब्रह्मांड धान धानंतर विचारं सिध मर्छांद्रनाथ कथलै सारं अनंत नरलोक तिरंति ॥ ७३ ॥ २६८ ॥

मृत धारेपारं सत्य सत्य भापंत चौरंगीनाथ त्रिभवने विस्तारकाया अछंव हाथ ऊर्ध सुर्ग भवन बोलीयै अथै पाताल भवन बोलीयै इति तीन भवन बोलीयै ॥ ७४ ॥ २६९ ॥

द्वै पगरा द्वै सिर द्वै हाथैरा द्वै सिर में पासेरा द्वै सिर का दोर अर्ध अर्ध मध्ये द्वै सिर ॥ ७५ ॥ २७० ॥

ए अष्ट सिर अष्ट नाग बोलीयै, कादोर (?) तीन भवन बोलीयै, मध्ये धान धानते विचारं अर्ध नाड़ी जिभ्या बोलीयै, अनंत नाग बोलीयै ॥ ७६ ॥ २७१ ॥

अर्धा नाड़ी इन्द्री वासिग नाग बोलीयै, वामें पगरा सिर कंकोड नाग बोलीयै, दिपन करेरा सिर पवन नाग बोलीयै ॥ ७७ ॥ २७२ ॥

बावें करेरा सिर महा पवंग नाग बोलीयै, मेर पासेरा दषपन सिर सुंसनाग बोलीयै । एते सररीरे अष्टनाग बोलीयै ॥ ७८ ॥ २७३ ॥

गंगा जमुना सरस्वती नरबदा गोदावरी देवनदी गोमती एते सररीरे सपत सलता वसै ॥ ७९ ॥ २७४ ॥

जिभ्या दषण पासै गंगा वसै, जिभ्या वामें पासै जमुना वसै, मध्य जिभ्या सरस्वती वसै, पवन नाड़ी नरबदा वसै ॥ ८० ॥ २७५ ॥

अनिनाड़ी गोदावरी वसै, मेर मध्ये देवनदी वसै, मूत्र नाड़ी गोमती वसै, इति सररीर मध्ये सप्त सलिता वसै ॥ ८१ ॥ २७६ ॥

सररीरे सप्त समुद्र वसै, पोर नीर दधि सुरा मधु सार घ्रित इति सररीरे सप्त समुद्र वसै ॥ ८२ ॥ २७७ ॥

मूत्र कौ पार समुद्र बोलीयै, हिरदै कर्ण रस समुद्र बोलीयै, नेत्रै नीर समुद्र बोलीयै, सलेपमा नासिका कौ दधि समुद्र बोलीयै ॥ ८३ ॥ २७८ ॥

बीज गीज को घृत समुद्र बोलीयै, सप्त दीप चण्य मनुष्य नासिका कर्ण हस्त पादुका उद्र इति सररीरे सप्त दीप बोलीयै ॥ ८४ ॥ २७९ ॥

सररीरे चतुर दिगपाल वसै, ऊर्ध्व भाग कौ पूरव दिग बोलीयै, इष्ट कर्न कौ दृष्यन दिगपाल बोलीयै ॥ ८५ ॥ २८० ॥

हेतवुध मत स्नुत के उत्तर दिगपाल बोलीयै, सररीरे चतुर दिगपाल बोलीयै ॥ ८६ ॥ २८१ ॥ -

रात दिन जाग्रत कौ दिन बोलीयै, निद्रा कौ रात्रि बोलीयै, ए सररीरे दिन रात बोलीयै, विंद कौ चंद्र बोलीयै ॥ ८७ ॥ २८२ ॥

पवन को सूर्य बोलीयै, ए सररीरे चंद्र सूर्य बोलीयै, इंह कौ सिवसक्ति बोलीयै, पंच तीर्थ केदार सागर ॥ ८८ ॥ २८३ ॥

गया प्रयाग वाणारसी सिरे केदार बोलीयै, उदरे सागर बोलीयै, कंठे गया बोलीयै ॥ ८९ ॥ २८४ ॥

नाभि प्रयाग बोलीयै, सकल व्यापक वाणारसी बोलीयै, ए सररीरे पंच तीर्थ बोलीयै ॥ ९० ॥ २८५ ॥

पंच भूत । पृथ्वी अणु तेज वायु आकास ए पंचभूत काया मध्य बोलीयै ॥ ९१ ॥ २८६ ॥

पंच प्रकृति । कर्ण चक्षु नासिका जिभ्या इन्द्रा ए सररीरे पंच प्रकृति बोलीयै ॥ ९२ ॥ २८७ ॥

च्यार पानी । स्वेतरज अँडरज जारज उद्वीरज ॥ सिरे स्वेतरज पांन बोलीयै, नेत्रे अँडरज पांन बोलीयै, उदरे जारज पांन बोलीयै, सर्व तुचा कौ उद्वीरज पांन बोलीयै ॥ ९३ ॥ २८८ ॥

ए सररीरे च्यार पान बोलीयै । चौरासी लष जीव जोन को सररीरे बवेकी बोलीयै तीन सै साठ हाड कौ ॥ ९४ ॥ २८९ ॥

सवा लाप परवत बोलीयै, बौहतरि सैस नाड़ी कौं बौहतरि सहस
नदी बोलीयै, सर्व संधि कौं सोलै तिथि बोलीयै ॥ ९५ ॥ २९० ॥

सप्त धात कौ सप्त वार बोलीयै, नवद्वार कौ नव ग्रह बोलीयै, सर्व
सूत्र कौ सत्ताईस नक्षत्र बोलीयै । च्यार भेद नाभि हृदै ॥ ९६ ॥ २९१ ॥

कंठ मुप ए च्यार वेद नाभि रघुवेद बोलीयै हृदै जुजरवेद बोलीयै,
कंठ साम वेद बोलीयै ॥ ९७ ॥ २९२ ॥

मुपे अथर्वण बोलीयै, ए सरीरे चार वेद बोलीयै दया धर्म पराकर्म
क्रोध ॥ ९८ ॥ २९३ ॥

ए च्यार जुग बोलीयै, दया कौ सतजुग बोलीयै, धर्म कौ पराक्रम
कौ द्वापर जुग बोलीयै ॥ ९९ ॥ २९४ ॥

क्रोध कूं कलजुग बोलीयै एते सरीरे च्यार जुग बोलीयै एवं नाना
रूप विधानाम पिंड ब्रह्मांड छे ॥ १०० ॥ २९५ ॥

पट् चक्र अक्रिता काया गोहाचक्र लिंग चक्र नाभि चक्र हृदै चक्र
कंठ चक्र भ्रुव चक्र ए पट् चक्र बोलीयै ॥ १०१ ॥ २९६ ॥

गोहा चक्र कूं आधार चक्र बोलीयै, च्यार पांषड़ी रक्त वर्ण कंवल
बोलीयै ॥ १०२ ॥ २९७ ॥

आधार सक्ति नाँव देवता सूर्य प्रभाति क्रांति तत्र अस्थाने अक्रोचने
वध देवा अग्नि वृधि आयु वृधि सर्व व्याधि निवारणं ॥ १०३ ॥ २९८ ॥

तिहां थीं तीन अंगुल अंतरै लिंग चक्रं स्वाधि अस्थान बोलीयै
॥ १०४ ॥ २९९ ॥

पट् पांषड़ी कंवल पीत वर्ण कामेश्वर नाम देवता दीर्घ ब्रह्म सूत्र
॥ १०५ ॥ ३०० ॥

ब्रह्म अग्नि रीथित तीन तिहांणा रा थान तत्र ध्यान बंध अक्रोचने
त्रिभवन जयंत ॥ १०६ ॥ ३०१ ॥

दिव दृष्टि तहाँ कूंती दस आंगुली आंतरै नाभि चक्र मन पर बोलीयै
दस पांषड़ी कमल कपिल वर्ण सेवता नाम देवता ॥ १०७ ॥ ३०२ ॥

छत्र बाल आकार सर्व नाड़ी रा मूत्र अस्थान पवन रीथित तत्र
ध्यान बंध अक्रोचने वक्र काया बोलीयै ॥ १०८ ॥ ३०३ ॥

तिहां कूं ती द्वादस आंगुली आंतरै हृदै चक्र अनहत बोलीयै द्वादस
पांषड़ी कमल स्वेत वर्ण प्राण लिंग देवता सूर्य कोटि प्रभा अमृत लिंग

बोलीयै, सर्व धर्म व्यापार कारक तत्र ध्यान बंध अकोचने सर्व कर्म निवर्त होइ ॥ १०९ ॥ ३०४ ॥

तिहां कुंती अष्ट आंगली अंतरै कंट चक्र त्रिमुध बोलीयै, सोलै पांपड़ी कमल धूम्र वर्ण जो निराकार नाद धुनि नाम देवता तत्र ध्यान बंध अकोचने स्वास उसास निवारण होइ, सर्व व्याधि पंडण होइ, आयोर्बुद्धि ॥ ११० ॥ ३०५ ॥

तिहां कुंते सोलै अंगुली अंतरै भूचक्र बोलीयै, अग्याग्यास बोलीयै, दोइ पांपड़ी कमल रक्त वर्ण रुद्र नाम देवता हेत बुधि चेतना जाग्रत राथान तत्र ध्यान बंध अकोचने मन वायो आस्तंभना विश्वमृत निद्रा निवारण देह सिधि फल प्रदायक, इह कूं पेचरी मुद्रा बोलीयै, इहकौ जोगाभ्यास ध्यान बोलीयै ॥ १११ ॥ ३०६ ॥

तिहं ऊपर अंगुल एक अंतरै सुन्य ब्रह्मड बोलीयै, तिहं कूं गगन मंडल बोलीयै, तिस कूं चंद्रमंडल बोलीयै, तिस कूं देव भुवन बोलीयै । तिस कूं सिध भवन बोलीयै, एते नाम अस्थान पिंड ब्रह्मड देव देवता थान थानंत (धान धानंत) मूर्ति सतगुरु मछिंद्रनाथ प्रसादे आहारी फीटीला आंति सिध एकत त्रिभवने गोप्य गुरमुषे छलिछा (वा) आंपुना ही रूप रेप नहीं तहां प्रवाणवां कैसा ॥ ११२ ॥ ३०७ ॥

दोइ पप प्रासवा गुर उपदेसा इह कूं पिंड ब्रह्मड कूं दोइ पप बोलीयै, इह नाम अस्थानक कूं चौरासी पंड ग्यान बोलीयै, इह कौ सवा लाप उपदेस बोलीयै, इह कौ बाणवै लष्य फांकी बोलीयै ॥ ११३ ॥ ३०८ ॥

इतै सर्व जाणिया, गुर उपदेस सै प्रवाणवा, एते एक मध्ये सारं तिनै पिंडरा होइ उधारं; इह कौ सास्त्र प्रतीत गुर प्रतीत आत्मा प्रतीत बोलीयै, इह कूं विमर्ण बोलीयै, एते एक नाम अस्थान धिन तरं ॥ ११४ ॥ ३०९ ॥

मन पवन संजोग भईला विस्तार, ए सिधांत काया प्रमाण पिंड ब्रह्मड, इह रचे कर्ण इह वित न जिह रे सरणें समाया ॥ ११५ ॥ ३१० ॥

अप्रमाण ले जीवन उपाया, सति बंदंत चौरंगीनाथ चिन गुर उपदेसे लष्या न जाई, त्रिभवने अगोचर हरु ब्रह्मा जानि; सिध संकेत अचंभू वानि ॥ ११६ ॥ ३११ ॥

अकथ कथाते कथना न जाई, सति बंदंत चौरंगी विरला हिरदै समाइ । अप्रमाण ले जीवन उपाया ॥ ११७ ॥ ३१२ ॥

एति वदंत चौरंगीनाथ विन गुर उपदेसै लष्या न जाई, त्रिभवने
अगोचर हरु ब्रह्मा जानि ॥ ११८ ॥ ३१३ ॥

अपष्या पष्या नहीं रूप रेष नांहि गुर उपदेसै आयसं प्रतिष्य
पिंड ब्रह्मंड लाह रे पुरणा ॥ ११९ ॥ ३१४ ॥

तीन भवन भरिपूर आप आकार विहूना श्री गुर मंछिद्रनाथ
षचने अम्हारी फीटली भ्रांति ॥ १२० ॥ ३१५ ॥

स्वयं प्रतीत चौरंगीनाथ अनंत पिंडेरा होइ मुक्ति, अमूल तै मूल
उतपना निराकार तै उतपना आकार ॥ १२१ ॥ ३१६ ॥

अरूप तै रूप उतपना, शून्य को हो भाई सिष्टि का विस्तार, अमनि
तै मनि उतपना, अवाइ उतपना वाइ ॥ १२२ ॥ ३१७ ॥

सुन्य थै थूल उतपना, अध तै घाट न होइ सर्व संज्योगै उतपनी
काया, सर्व विज्योगै बिनासीयै ॥ १२३ ॥ ३१८ ॥

इह विमणा सिध संकेत दुर्लभं, गुर उपदेसै कथतै दुर्लभं, प्रतिपालतै
दुर्लभ, मन पवन विषम हलोल ॥ १२४ ॥ ३१९ ॥

टल मल विंद निद्रा अघोर, एते कारणै जापता व्याकुलता स्वयं
प्रतीति न पाया प्रमान, श्री गुरु मंछिद्र परसनै चौरंगी अमनतै मन
त्रिभवनें थीरं ॥ १२५ ॥ ३२० ॥

एकांत कर लै राति दिनं, आसण वंध भेद मुद्रा जोग जुगति गुर
वचन प्रतिपालला, पियंडरा भइला भोष्य मुक्ति ॥ १२६ ॥ ३२१ ॥

जे जन वृद्धिबै सो जन बूझै दुतरतिरौ मृत माया गुर उपदेसं दिद
चित मनै सीलंत एक थूल काया ॥ १२७ ॥ ३२२ ॥

श्री गुर वचने सिधि थाने आपना स्वयं प्रतीत करतव्या दोइ
समतुल्या ॥ १२८ ॥ ३२३ ॥

तिणै पिंडेरा भोष्य मुक्ति त्रिभवने बिसतार, अकुंठ काया विसेस
रघु गुर उपदेसै जानीयै ॥ १२९ ॥ ३२४ ॥

दिद चित मनै कलेस न भावा प्रीति पालना, सिध संकेत बानी
अमन तै मन, अवह तै बहाई, आसन बंध्या तै ॥ १३० ॥ ३२५ ॥

एते एक संजोगे तीन भवन एकांति साधना सपत पाताल सपत
पाताल ऊपर सपत दीप सपत दीप ऊपर सपत सुनकार ॥ १३१ ॥ ३२६ ॥

सपत सुनकार ऊपर बसत निरालंघ निरंजन निराकार ग्यांने मन पवन हेत वुध मति ॥ १२२ ॥ ३२७ ॥

ए अपार श्री गुर मछिंद्रनाथ प्रसादे इह कौ सिध संकेत बोलीयै, इह कौ गुर उपदेश बोलीयै, इह कौ परम पर अपार अनुपम बोलीयै ॥ १३३ ॥ ३२८ ॥

इह कौ ध्याईयै कंद्रप जित्रा चाप त्रिवंध दाय जै सकति संकोच जै गंठि फुटै ब्रह्म अग्नि प्रजालै ॥ १३४ ॥ ३२९ ॥

ब्रह्म मंडल फोड़ीयै, त्रिवेणी संगम पवन संचारीये, पट्चक्र कौ फुटीयै ॥ १३५ ॥ ३३० ॥

सुमेर मध्ये वाट गगन भेदीयै, भंवर गुफा प्रवेसीयै, इहां कौ पिंड प्राण परस्त्री बोलीयै इह कौ परम सिध बोलीयै ॥ १३६ ॥ ३३१ ॥

इह कौ अगम बोलीयै, इह कौ परम परमार बोलीयै, इह अहोनिस् ध्यान चेतने च्यार तुटै न करता विद ॥ १३७ ॥ ३३२ ॥

परकंती पवन क्लपता मन अघोरता निद्रा इह कौ स्वयं प्रतीत बोलीयै, इह कौ पिंड प्राण परचौ साधन बोलीयै, इह कौ मृत्यु जयंत सिध पंथ बोलीयै ॥ १३८ ॥ ३३३ ॥

ए च्यार तुटै सो कायं अजरं अमरं निर विघन निष्यपत ॥ १३९ ॥ ३३४ ॥

त्रिभवने पूजा ते ऊपर कोउ नाहीं दूजा अयं सो परम पद सो परम आसण ॥ १४० ॥ ३३५ ॥

देवन सुर नर पाए प्रमाण वेद साख अगोचर ब्रह्मा न जानी त्रिभवने दुर्लभ ॥ १४१ ॥ ३३६ ॥

गुरु उपदेसै जानीयै आप आपै प्रमानीयै ॥ १४२ ॥ ३३७ ॥

ए च्यार साध्या साधना स्वयं प्रतीते आप देषबा प्रमाणी ॥ १४३ ॥ ३३८ ॥

दिने दिने तेज बल त्रिधना बुधिमंत चेतन देह विकार सर्व व्याधि षंडन बायु अस्थंभना पाप पुन्य ललित षंडना ॥ १४४ ॥ ३३९ ॥

दिष्टि स्रु सुर्तिगता वर्धना विभ्रम भांति माया छेदना बुधि सुबुधि आयो वर्धना ए च्यार विल्यायं ॥ १४५ ॥ ३४० ॥

एते एव स्वयं प्रतीति .आपे आप देपवा प्रमाणं श्री गुरु मछंद्र-
नाथ प्रसादे सिध चौरंगीनाथ ज्योति ज्योति समाइ ॥ १४६ ॥ ३४१ ॥

इति श्री चौरंगीनाथ जी की प्राणसांकली सपूरण । इति श्री योग-
शास्त्र पोह वदि शनि वा० ॥

ॐ नमो आदेस गुरु कूं अकल सकल कै तेज वायो समेरु में एक
वृक्ष लगावे यो जामोत यात .सामो काल वृक्ष वटी पांच डालि एक
डालि उत्तर कूं गई दूजी डालि पूरव कूं गई तीजी डालि दक्षिण कूं गई
चौथी डालि पश्चिम कूं गई पाँचमी डालि इकवीसमैं ब्रह्मंड गई एक मुषी
रुद्राप एक मुपी रुद्राप कहा बोली ब्रह्मा को कमल दोय मुपी रुद्राप
कहा बोली ब्रह्मा के नेत्र त्रिमुपी रुद्राप कहा बोली ब्रह्मा विष्णु महादेव
चोमुपी रुद्राप कहा बोली च्यार वेद पांचमुपी रुद्राप कहा बोली पांच
पांडव छ मुपी रुद्राप कहा बोली पट दरसन सात० सात दीप आठ०
अष्टांग योग नव० नवनाथ दस० दस द्वार इग्यार० इग्यार लिंग द्वादश
वारमी हणमंत जती त्रिपुरा दैप चलै संग्राम आश्रो पार्वती कहां रुद्राप
कै ग्यान हाथै बांधे तो हाथणा उर पुर कौ राज मस्तक बांधे तो इंद्र
की पदवी कटैं बांधे तो कृष्णापुर कौ राज रुद्राप जांणि बांधे तो एकोत्तर
सो गाउ प्रभात एकोत्तर सौ लिंग अंगीकार रुद्राप मंत्र धांणि बांधे तो
एकोत्तसो गौ हते प्रभाते ॥ मंत्र रुद्राप रो १०८ बेला जाप कीजै
॥ इति ॥ ३४२ ॥

ॐ गुरुजी—सलपुर नगर सुशंख रावल जांके सुत शिमरन कियो ।
यम फांस त्राश निवारो सब दुःख सुन्दर तन असिथर दियो ।

श्री गो० । जय श्री० । जति गो० ॥ ६ ॥

ॐ गुरुजी—श्री प्रसुधर तप कठिन किनों सागर तट मठ बांधियो ।
धुन्धूकार निवारणे हित श्री मञ्जुनाथजी प्रघट भयो ।

श्री गो० । जय श्री० । जति गो० ॥ ७ ॥

ॐ गुरुजी—श्री पति नाथ सनाथ अष्टक पढत विघन नसावेहि ।
ब्रह्म पीर चौरंगी सोई नर मन बांछित फल पावेहि ।
श्री गोरक्ष चरणों प्रणाम्यहं । जय श्री नाथजी के चरणों प्रणाम्यहं ।
जति गोरक्ष के चरणों प्रणाम्यहं ॥ ८ ॥ ३४७ ॥

इति गोरप बालं मम पालं जीतो जम कालं मंगला आर्तिया अष्टक
पुरो शिवम् सिद्धो आदेश आदेश अटल क्षेत्र योग शास्त्र नमाम्यहम् ॥



१०-चुणकर नाथ (चौणकनाथ*) जी की सबदी

काकडी करंम करंता^१ अरवधू ।
 भाई चलै असरालं ॥
 सूर्ने देवलि चोर परईसै^२ ।
 चेतौ रे चेतन^३ हारं ॥ १ ॥ ३४८ ॥
 सांधि सूधि के गुर मरै^४ ।
 वाई स्यूं बिंद^५ गगन स्यूं फेरै ॥
 मन का वाकल चुणियाँ^६ पोलै ।
 साधी^७ ऊपरि मन क्यूं^८ डालै ॥ २ ॥ ३४९ ॥
 वाई वंध्या सकल^९ जगे^{१०} ।
 वाई किन ही न वंध ॥
 भाई विह्वूणां टहि^{११} पडै ।
 जौरे कोई न पंध ॥ ३ ॥ ३५० ॥
 नीचै पोज्या नीडा^{१२} पांणी ।
 ऊचै का तिस मूवा ॥
 सबद विचारै ते बड़ कहिए ।
 दिन का^{१३} वडा न हूवा ॥ ४ ॥ ३५१ ॥

ॐ ग प्रति में चौणकनाथ के नाम से यही सबदियाँ हैं ।

१-ग. न कीजै रे; २-ग. पैड़ेगा; ३-ख. तनहारं; ४-ग. सिंध साधक
 मेरै; ५-ख. बांद; ६-ग. चुणि चुणि; ७-ग. सीडी; ८-ख. क्यूंमन;
 ९-ख. सहल; १०-ख. जुग; ११-ख. टहि; १२-ग. नैडा; १३-ग. करि ।

११-जलंध्री पात्र जी की सबदी

सुनि मंडल मैं मन का धासा ।
 तहां^१ परम^२ जोति प्रकासा ॥
 आपैं^३ पूछै आपैं कहै ।
 सतगुरु मिलै तौ^४ परम^५ पद लहै ॥ १ ॥ ३५२ ॥
 एक अचंभा ऐसा हुआ ।
 गागरि मांहि उसारवा कूवा ॥
 वोछी लेज पहुंचै नाहीं ।
 लोक पयासा मरि मरि जाहीं ॥ २ ॥ ३५३ ॥
 आसा पास दूरि करि ।
 पसरंती नि (र) वारि
 सिध साधिक स्यूं संग करि ।
 सति गुरु^६ ज्ञान विचारि ॥ ३ ॥ ३५४ ॥
 धरती आकास^७ पवन^८ पाणी ।
 चंद सूर पट दूरसंग जांणी ॥
 ऊंकार का जांणै मंत ॥
 औसा सिध अलख अनंत ॥ ४ ॥ ३५५ ॥
 गोपीचंद कहै स्वामी वस्ती^९ रह्युं तौ कद्रप व्यापै ।
 जंगलि रह्युं^{१०} पुधा संतापै ॥
 आसणि रह्युं तौ व्यापै^{११} माया ।
 पंथि चलूं तौ छीजै काया ॥
 मीठा पाऊं तौ व्यापै^{१२} रोग ।
 कहौ किसी^{१३} परि साधूं^{१४} जोग ॥ ५ ॥ ३५६ ॥

१-ग. जहां; २-ग. प्रम; ३-ग. आपे; ४-ग. तै; ५-ग. प्रम;
 ६-ग. गुरुमुप; ७-ख. आस; ८-'ग' में 'गर' अधिक पाठ; ९-ख.
 बती; १०-जाऊं; ११-ख. लागै; १२-ख. बाड़ै; १३-ग. कासी;
 १४-ग. प्रसाध ।

अ्रवधू संजमि अ्रहारं ।
 कंद्रप नहीं व्यापै ॥
 वाई आरंभ पुधा न संतापै ।
 सिध आसण नहीं लागै माया ॥
 नाद पयाणै न छीजै काया ।
 जिह्वा स्वाद न कीजै भोग ।
 मन पवन ले साधौ जोग ॥ ६ ॥ ३५७ ॥*
 थोड़ा पाइ तो कलपै कलपै ।
 धरणं पाइ तो रोगी ॥
 दहूं पपा की संधि विचारै ।
 ते को विरला जोगी ॥ ७ ॥ ३५८ ॥ +
 मरदने केस सथामि लै अ्रवधू ।
 पवनां थामि लै काया ॥
 अ्रन्तसे जुरा मरन थांमि लै ।
 विचार त्याग लै माया ॥ ८ ॥ ३५९ ॥
 एक राज छाड़ि करि जोगी हुए ।
 एक जोग छाड़ि घर वासं ।
 बूटा हस्ती बन कौ जावै ।
 स्वान करंग कौ पासं ॥

* ग. प्रति में इस पद के स्थान पर ८ पंक्तियों का एक पद इस प्रकार है:—

सांभलि अ्रवधू तत विचारं ।
 लै निज सकल सिरोमणि सारं ॥
 संजम अ्रहार कंद्रप नहीं व्यापै ।
 वाई अ्रहार पुधा न संतापै ॥
 सिध आसन नहीं लागै माया ।
 नाद पयानै नहीं छीजै काया ॥
 जिभ्या स्वाद न कीजै भोग ।
 मन पवनां ले साधो जोग ॥

+ यह पद केवल ग. प्रति में है ।

सत सिध मते पार
 न मरै जोगी न ले अबतार ।
 सुनि समावै बावै बीना ।
 अलप पुरप तहां ल्यौ लीना ॥ ९ ॥ ३६० ॥
 यहु संसार कुचक का खेत ।
 जब लग जीवै तत्र लग चेत ॥
 आष्यां देपै कानां सुणै ।
 जैसा बोवै तैसा लुणै ॥
 जोग न जोग्या भाग न भोग्या ।
 अहला गथा च मारा ॥
 ग्रामे गधा जंगलि सूकर ।
 (फिरि) फिरि ले अबतारा ॥ १० ॥ ३६१ ॥
 इहु संसो पाईए पेले ।
 अब बोईए ते आगै फलै ।
 इहु संसार करम की वारी ।
 जब लग सरधा सक्ति संसारी ॥ ११ ॥ ३६२ ॥
 पहलै कीया सो अब भुगतावै ।
 जो अब करै सो आगै पावै ॥
 जैसा दीजै तैसा लीजै ।
 ताठै तन धर नीका कीजै ॥ १२ ॥ ३६३ ॥
 अजपा जपना तप विन तपना ।
 धुनि गहै धरिवा ध्यानं ॥
 जोग संहारं पाप प्रहार ।
 असा अद्भुत ग्यानं ॥ १३ ॥ ३६४ ॥

* ९ वाँ और १० वाँ पद (पूर्ण संख्या ३६०, ३६१) केवल ग-
प्रति में हैं ।

१२—इत जी (दत्तात्रेय) की सबदी१

जान थी अजान होइवा ।
 तत लेइवा छानि ॥
 गुरु कीये लाभ है अवधू ।
 चेला कीयां हानि ॥ १ ॥ ३६५ ॥
 वडै कहां वड़ा ना होइवा ।
 लहुड़ा न ऊतरिवा पारं ॥
 आडाडंबर जोग न होइवा ।
 गरवा तत विचारं ॥ २ ॥ ३६६ ॥
 बहुतानि बहु चिंतानि ।
 दुलिया पासि बंधनं ॥
 एकाएकी महा सुपी ।
 ज्यूं कँवारी हाथि कंरुनं ॥ ३ ॥ ३६७ ॥
 मढ़ी न बंधिवा सती न प्रभोधिवा ।
 भिष्वा न पाइवा स्थूलं ॥
 पंच घर चेताइवा एकांति रहिवा ।
 ए जीवन का मूलं ॥ ४ ॥ ३६८ ॥
 कोटि मधे कोई एक भूमै ।
 कोटि मधे कोई एक सूमै ॥
 कोटि मधे कोई एक सूरु ।
 कोटि मधे कोई एक पूरा ॥ ५ ॥ ३६९ ॥
 सूच्यां का पंथ हाच्यां का विश्राम ।
 सुरता लेऊ विचारी ।
 अणपरचै प्यंड भिष्वा मांगै ।
 अंतकाल होइगी भारी ॥ ६ ॥ ३७० ॥
 सुर मंदिर तर मूल निवास ।
 भिष्वा भोजन रहनि उदास ॥
 सकल प्रमिह भोग तियाग ।
 तौ क्यूं न सुष करंत बैराग ॥ ७ ॥ ३७१ ॥

रथा करपट निधन कथा ।
 भेद अभेद विवरजित पंथा ॥
 स्वाद विवाद विवरजित तुंड ।
 तौ सुप में जीवै मुंडित मुंड ॥ ८ ॥ ३७२ ॥
 मारि न पाणां मुरदार न कहणां ।
 अहनिंसि रहेवा ध्यानं ॥
 फुरै त रोजी नहीं त रोजा ।
 असा ब्रह्म गियानं ॥ ९ ॥ ३७३ ॥
 लोका मधे लोकाचार ।
 सतगुर मधे एकंकार ॥
 जे तू जोगी त्रिभुवन मार ।
 तऊ न छाड़ै लोकाचार ॥ १० ॥ ३७४ ॥
 जे तू छाडिस लोकाचार ।
 तौ तू पायेसि मोप दुवार ॥
 उनमोन मंडप तहां निरवाण देव ।
 सदा सजीवं निभावन भेव ।
 लौलीन पूजा तहां दीव न धूप ।
 सति सति भापंत दत अवधूत ॥ ११ ॥ ३७५ ॥
 रूंत क्रिया हमारै जनेउ बोलिये ।
 जत हमारै धोती ।
 गुरू हमारै अलेप पुरिप बोलिये ।
 हिरदा पुस्तक पोथी ॥ १२ ॥ ३७६ ॥
 दत जू लागा तत स्यूं ।
 तत्त दत्त ही मांहि ॥
 तत्त दत्त परचा हुवा ।
 तत्र दूजा कहणां नाहिं ॥ १३ ॥ ३७७ ॥
 अग्नि मधे अग्नि होइवा ।
 जल मधे होइवा नीरं ॥
 बाइ रूप त्रिभुवन पेलिवा ।
 सिध संकाच राषिवा सरीरं ॥ १४ ॥ ३७८ ॥

अवधू संजमि रहै तो क्या करै रोगं ।
 संतोष आया तौ क्या करेंगे भोगं ॥
 आत्मा जाणंत तौ क्या कथै ग्यानं ।
 प्रमात्मा पोजंत तौ क्या धरै ध्यानं ॥ १५ ॥ ३७९ ॥
 आकार मुकता स्यंभू चलता सारं ।
 संसार रहिता ।
 अगम वहिता खोजी ।
 षोजंत वयारं ॥ १६ ॥ ३८० ॥
 दत्त की देही तत्त की ।
 तत्त की राजा तत्त ही त्रिलसै पाई ॥
 यक डग जाइ न दत्तजी
 तत्तमें रह्या समाई ॥ १७ ॥ ३८१ ॥

दत्तात्रे (दत्तात्रेय) जी की सवदी*

पिमा जापं सील सेवा ।
पंच इंद्रो हुतासनं ।
उनमनि मंडप निरवान देव ।
सदा जीवत भावना भेव ।
लौलीन पूजा मन पहूप ।
सति सति भापत श्री दत्त देव अवधूत ॥ १ ॥ ३८२ ॥

अस्थूल मंदिर मन धजा ।
साँच तुलसी सील मंजरी ।
दया पहूप संतोप कलस ।
गिनांन घंटा सुरति आरती ।
आत्मदेव अनूप पूजा ।
अपंड मूरत्ति उत्तमो सदा ॥ २ ॥ ३८३ ॥

करम भरम हम ध्याइ करते ।
नह क्रम सत गुर लषाया ।
करम भरम का संसा त्यागा ।
सवद अगोचर पाया ।
उनमन रहना भेद न कहनां ।
पीवनां नीभर पांनी ।
पानी का सा रंग ले रहनो ।
यूं बोलंत देवदत्त वानो ॥ ३ ॥ ३८४ ॥

पृथी वाइ अनल आकास ।
आपो अगनि चंद्रमा ।
मंज मध वाहरती मीन पिंगुला ।
सस कुरर अरभ कवारी ।
सर करता उइतर्प उर्ननाभी ।

सपे सरो तैं मे गुर राज राजन ।
 चतोविस्तराश्रत ॥ ४ ॥ ३८५ ॥
 काया सीसमन किस्तूरी ।
 जरनां ढकन कीजै ।
 जा विदं तैं यहु पिंड ऊपनां ।
 सो क्यूं भग मुपि दीजै ।
 सति सति भाषंत श्री देवदत्त औधूत ।
 इन विधि मारग गहीए ।
 तौ बूढ़ा जोगी तै वाला ह्वै रहीए ॥ ५ ॥ ३८६ ॥
 अहंकारस्य महाव्याधि ।
 दीरघ रोग विटंबनं ।
 रोच विप्री तिस री रानां ।
 विनं पान पद न परसते ॥ ६ ॥ ३८७ ॥
 निरालंबो पद प्रापतं ।
 चिंतते अचल गता ।
 नृवंती सरव कृया ।
 तसि मुनि दृष्टा परंपरा ॥ ७ ॥ ३८८ ॥
 १बहुतानं बहु चिंतानं ।
 दुर्तीया पास जु बंधन ।
 ऐका ऐकी परम सुपी ।
 ज्यूं कंवारी हाथि कंकनं ॥ ८ ॥ ३८९ ॥
 जानि^२ कै अजांनि होइवा ।
 तत्त लेवा छांनि ।
 गुरु कीया लाभै है अवधू ।
 चेला कीयां हांनि ॥ ९ ॥ ३९० ॥
 ऐका ऐकी सिध्या नांउं ।
 दुतीए नांम साधवा ।
 च्यारि पांच फेट्टेवा नांउं ।
 दस बीस ते लसकरा ॥ १० ॥ ३९१ ॥
 निराकारं च मेक ध्यानं ।

उभयौ संग विवरजितं ।
 प्रकीरति रता जोगी ।
 सात पांच भरमते ॥ ११ ॥ ३९२ ॥
 आसा नाम महा दुषं ।
 निरासा प्रम सुपं ।
 आसा निरासा दोऊं त्यागी ।
 तत्र सुप सोवै तंपिगुला ॥ १२ ॥ ३९३ ॥
 धूल धूश्रान गात्रानं ।
 पृथी आप समो समं ।
 देवा रात्री न जानामं ।
 जोग बैराग ऐ लछनं ॥ १३ ॥ ३९४ ॥
 दत्त दत्तं नगन सरूपं ।
 निराससै सुध मनसा ।
 नृगुन रहत गोत्रो यथा नास्ति ।
 नास्ति संध्या त्रपनं ।
 किरीया क्रम दोऊं नास्ति ।
 ब्रह्म ग्यानं पि लछनं ॥ १४ ॥ ३९५ ॥
 गगन सने फल समंद्रं ।
 ब्रह्म सक्ति निज दया ।
 जिभ्या स्वाद विवरजितं ।
 इन्द्रियां स्वादं प्रत्तजिते ।
 कंद्रपो द्रपनो जस्य ।
 ब्रह्म ग्यानौपि लछनं ॥ १५ ॥ ३९६ ॥
 दत्त जु लागा तत सूं ।
 तत्त दत्त ही मांहि ।
 दत्त तत्त ऐकै भया ।
 अब्र दूजा कोऊ नांहि ॥ १६ ॥ ३९७ ॥ ❀
 अब्रगत्तं च अक्षरं पितस्य आकारं ।
 यस्य रूप पिरंति ।
 तस्य श्रुत काम स्थिरं ॥ १७ ॥ ३९८ ॥

अवगतं च अक्षरं
 बीज विवरजित तरवरं ।
 त्रिय लोक तस्य छाया ।
 स्वादं जानंत ते धीत रागं ॥ १८ ॥ ३९९ ॥
 अल्प अहारं षडा विचारं ।
 काया कसना मुष नहिं हंसनां ।
 तत्र जाइ जोगी ।
 सरवस भोगी असा जोगी ॥ १९ ॥ ४०० ॥
 अलभ भिद्यथा काया रद्यथा ।
 पांचूं चेला आरंभ मेदै ।
 तत्र जाइ जोगी सरवस भोगी ।
 असा जोगी ॥ २० ॥ ४०१ ॥
 इंद्री जीतं अल्प अतीतं ।
 तामस त्यागं दिठ वैरागं ।
 रहत अकेलं मन सूं बेलं ।
 तत्र जाइ जोगी सरवस भोगी असा जोगी ॥ २१ ॥ ४०२ ॥
 दिष्टि अदिष्टं मन न मुष्टं ।
 पाप न पुनि जोति न सुन्यं ।
 ताहू आगै करम न लागै ।
 तत्र जाइ जोगी सरवस भोगी असा जोगी ॥ २२ ॥ ४०३ ॥
 ग्रामे ग्रामे पुस्तग पुंज पुंजे ।
 पुरी पुरी ब्रह्मा वेद वकंता ।
 नव लप कोटी कोई ततवेता ॥ २३ ॥ ४०४ ॥
 नादो न विंदो कलपानां न छाया ।
 मनोरथो न माया आगमो न नगमो ।
 अवधूत न विग्यांन मांटी न छाया ।
 कलपनां रह तत्तसई ।
 सुधनां ना त आलमां ॥ २४ ॥ ४०५ ॥
 आनंद मूलं प्रातम त्तं ।
 संकल्प विकल्प मोह न मुक्तं ।

सुभांइ लीला विचारति नितं ।
 तमेव जोगी आत्म ततं ॥ २५ ॥ ४०६ ॥
 निरवासनां निरालंभो ।
 छद्मं मुक्तो बंधनात् ।
 छिन्न सै सक्ति मात्रेनं ।
 चिष्टंत सुषं प्रनवत ॥ २६ ॥ ४०७ ॥
 जल मधे धरती नास्ति ।
 आकासे प्रवरततो ।
 बह्व ग्यांनी स्थूल नास्ति ।
 पूरन ब्रह्म सनातनं ॥ २७ ॥ ४०८ ॥
 आपा नास्ति परा नास्ति ।
 नास्ति काया कलि विषं ।
 बुधि वासनां मनो नास्ति ।
 तत्र देव निरंजनं ॥ २८ ॥ ४०९ ॥

॥ इति सिधूं की सवदी संपूर्ण ॥

१३-देवल जी की सबदी

देवल भया^१ दिसंतरी ।
 सब जग देषा^२ जोइ ॥
 नादी^३ वेदी बहु^४ मिलै ।
 परभेदी^५ मिलै न कोइ ॥१॥४१०॥
 देवल निह केवल भया^६ ।
 सुरति निरति ले बोलि ॥
 ज्ञान रतन की कोथली ।
 काहू^७ पारिष आगे पोलि ॥२॥४११॥
 देवल जिभ्या वंद^८ दे ।
 बहु^९ बोलतां^{१०} निवारि ॥
 सारीषा स्यू^{११} संग करि ।
 गुरु मुष ज्ञान विचारि^{१२} ॥३॥४१२॥
 पारप नर नही पटंतरै^{१३} ।
 सबदी^{१४} मोल न तोल ॥
 देवल देखि विचारि^{१५} करि ।
 तौ बोली जै बोलि^{१६} ॥४॥४१३॥

१-ग. भरो; २-ग. मेल्हा; ३-ख. नाटी; ४-ग. बहौ; ५-ग. प्रभेदी;
 ६-ग. भए; ७-ग. कहु; ८-ग. बंध; ९-ग. बहौ; १०-ग. बोलणां; ११-ग.
 सूं; १२-ख. विचारी; १३-ग. पंतरै; १४-ग. सबदं; १५-ग. विचारे;
 १६-ग. बोले ।

१४-धूधलीमल जी की सबदी

आइस जी आवो ॥
वावा आवत जात बहुत जुग बीता^१ ।
कछू न चढ़िया हार्थ ॥
इत्र का आवण सूफल फलिया ।
पाया निरंजन नार्थ ॥१॥४१४॥
आइस जी जावो ॥
वावा जे जाया ते जा दूर रहैगा ।
तामैं कैसा संसा ॥
बिछुरन वेलां मरन दुहेला ।
को जाणैं कत वासा ॥२॥४१५॥
आइस जी बैठो ॥
वावा बैठो उठी उठा बैठी ।
बैठि उठि जग दीठा ॥
घरि घरि रावल भिण्या मांगैं ।
इक अमी महारस मीठा ॥३॥४१६॥
आइस जी ऊभा ॥
वावा जे ऊभे ते इक टग ऊभा ।
स्यंम समाधि लगाई ॥
उभैं रहाई कौण फाइदा ॥
जै मन भ्रमै भाई ॥४॥४१७॥
आइस जी आडा ॥
वावा जे आडा तिनि गहि गुण गाडा ।
नौ दरवाजा ताली ॥
जोग जुगति करि सनमुप लागा ।
पंच पर्चासौं वाली ॥५॥४१८॥

आइस जी सोवो ॥
 बाबा जे सूता ते षरा विगूला^१ ।
 जनम गया अरु हार्या ॥
 काया हिरणी काल अहेडी ।
 हम देपत जग मार्या ॥६॥४१९॥
 आइस जी जागौ ।
 बाबा जे जाग्या ते जुगि जुगि जाग्या ।
 कहां सुण्यां सू^२ कैसा ॥
 गगन मंडल मैं ताली लागी ।
 जोग पंथ है ऐसा ॥७॥४२०॥
 आइस जी मरौ ॥
 बाबा हम भी मरणां तुम भी मरणां ।
 मरणां सब^३ संसारं ।
 सुर नर गंण गध्रव भी मरणा ।
 कोई विरला उतरै पारं ॥८॥४२१॥
 आइस जी जीवौ ॥
 बाबा जे जीया ते निति ही जीया^४ ।
 मार्या ते सब मूवा ॥
 जोग जुगति करि पवनां साध्या ।
 सां अजरांवर हूवा ॥९॥४२२॥
 आइस जी टगौ ।
 बाबा टगिया ते तौ मनवै टगिया ।
 अरु टगिया जम कालं ॥
 हम तौ जोगी निरंतर रहिया
 तजिया माया जालं ॥१०॥४२३॥
 आइस जी फेरीयै ॥
 बाबा जे फेरै तौ मन कूं फेरै ।

१-क. विगूला; २-ग. सो; ३-ग. सकल; ४-पाठान्तर क. प्रति :—

बाबा जे जीव्या ते नित ही जीव्या ।

दस दरवाजा घेरै ॥
 अरध उरध विचि^१ ताली लावै
 नौ निधि अठ सिधि मेरै ॥११॥४२४॥
 आइस जी धंधै लागौ ॥
 बाबा गोरष धंधै अहि निसि इक मनि ।
 जोग जुगति सूं जागै^२ ।
 काल व्याल का भै नहिं व्यापै^३ ॥
 नाथ निरंजनि लागै ॥१२॥४२५॥
 आइस जी देपौ ।
 बाबा इहां भी दीटा उहां भी दीटा ।
 दीटा सकल संसारं^४ ॥
 उलटि पलटि निज तत चीन्हिया ।
 मन सूं करिया विचारं ॥१३॥४२६॥
 चौंरासी पाटण ऊधा मार्या ता समया की कथा ॥
 आइस जी टगावै ×
 बाबा जिन रे टगाया तिन सध पाया ।
 तजि पेचर बुधि मति बोलै ॥
 जैसा कमावै तैसा पावै ।
 सति सति भाषै धूंधली मोलै ॥ १४ ॥ ४२७ ॥

१-ग. मध; २-ख. लागी; ३-ख. भै हम देया; ४-क पसारं ।

× ग. प्रति में यह पद अधिक है ।

१५—नागा अरजन जी की सबदीः

दारू तैं दाप उतपनी ।
 दाप कथी नही जाई ।
 दाप दारू जव^१ परचा भया ।
 दाप मै दारू समाई ॥
 पूरव उतपति पछिम निरंतर ।
 उतपति परलै काया ।
 अभि अंतरि पिंड छाड़ि ।
 प्रांन भरपूर रहै ।
 सिध संकेत नागा अरजन कहै ॥ १ ॥ ४२८ ॥
 आपा मेटिला सतगुर थापिला ।
 न करिवा जोग जुगति का हेला ।
 उनमन डोरी जव घेंचीला ।
 तव सहज जोति का मेला ॥ २ ॥ ४२९ ॥

ॐ क और ग प्रति में प्राप्त ।

१-क में नहीं है ।

१६—पारवती जी की सबदी

जल मल भरीला^१ नल ।
अग्नि न जलै^२ नाभी कै तल^३ ॥
अग्नि न धलै न परसै^४ किरण ।
ता कारणि पारवती जगत^५ का मरण^६ ॥ १ ॥ ४३० ॥
अहूठ हाथ कंधड़ी जल मल भरी ।
नासिका का पवन न पेलै नाम की तली ॥
उलटै पवनां गगन समाई ।
ता कारणि पारवती ये पसुवा मरि मरि जाई ॥२॥४३१॥
रूप विरष गिर कंदलि वास ।
त्रिगुण^७ कथा रहे उदास ॥
भिष्या भोजन सहज में फिरै^८ ।
ताकी सेवा पारवती करै ॥ ३ ॥ ४३२ ॥
काग त्रिष्टी वगो ध्यानी ।
बाल अवस्था भुयंग^९ अहारी ॥
सो अवधूत वैरागी पारवती ।
दूजी सब भेषारी ॥ ४ ॥ ४३३ ॥
धन जोवन की करे न आस ।
चित न रापै कामणि पास ॥
नाद बिंद जाके घटि^{१०} जरै ।
ताकी सेवा पारवती करै ॥ ५ ॥ ४३४ ॥
त्रिगुण^{११} कथा बहु विस्तार ।
जुगति निरंतरि^{१२} रहनि^{१३} अपार ॥
नान बिंद जाकै घटि जरै ।
ताकी सेवा पारवती करै ॥ ६ ॥ ४३५ ॥

१-ग. भरीया; २-ग. बलै; ३-ख. तले; ४-ग. प्रगट; ५-ग. जगत्र;
६-ग. मर्न; ७-ग. निर्धन; ८-ख. फुरै; ९-ग. भर्षंगम; १०-ग. घट ।
११-ग. निर्धन; १२-ग. निरंतर; १३-ख. रहण ।

अनिसप्रेही निहस्वादी ।
काम दग्धी दिने दिने ॥
तास भिष्या दे देवी पारवती ।
मोछि मुक्ति तत छिने ॥ ७ ॥ ४३६ ॥

१७—प्रिथोनाथ जी का ग्रंथ साध प्रष्ण † (१)

अस्थान^१ विन नम्री अलेप दरवाजा ।
सत संतोष वजीरं ॥
पंच चोरं गहि पड़ दार जीतिवा^२ ।
ते जोगी बलवीरं ॥ १ ॥ ४३७ ॥

विचार मंत्री धमेक पाइक ।
चित चेतानि कुटवालं ॥
नौ लप घाटी मन ले रुंधिवा ।
तव जीति लीया जम कालं ॥ २ ॥ ४३८ ॥

विषै कल्पना पग दे चांपी ।
धोपा बंधि बहाया ॥
कहि प्रिथीनाथ तव अदलि भणीजै ।
सुपी वसै गढ काया ॥ ३ ॥ ४३९ ॥^३

रहणि हमारी तपत भणीजै ।
मन^४ पवन दोइ घोड़ा ॥
सवद हमारा परतर पांडा ।
जिनि जम सौ कीया नबेडा ॥ ४ ॥ ४४० ॥

गगन हमारा बाजा बाजै ।
मूल मंत्र भल हाथी ॥
संसै काल गुर मुपि तोड्या ।
पंच पुरिप मेरे साथी ॥ ५ ॥ ४४१ ॥

† क—साध परण्या ग्रंथ ।

१-ख. सधानं; २-क. जीत्या; ३-यह पद्य केवल 'ख' प्रति में है;
४-ख. पन ।

जुगति हमारी छत्र सिंहासन ।
 महाशक्ति रिणवासं ॥
 पृथीनाथ ते पुरिष विचपिण ।
 मंदिर रच्या अकासं ॥ ६ ॥ ४४२ ॥

घड़ा मैवासा काया जीती ।
 मन सूं करि हथियारं ॥
 कहि पृथीनाथ मेरी तहां कटकई ।
 जिनि मुसिया सकल संसारं ॥ ७ ॥ ४४३ ॥

गण गंध्रप जिनि सवै संघारै ।
 दल बल के अधिकारी ॥
 सो बंदर हम बस करि लीया ।
 जिनि जीत्या बल भारी ॥ ८ ॥ ४४४ ॥

मन जीत्या तिनि त्रिभुवन जीत्या ।
 जीती सुंदर काया ॥
 गले पाव दे जौरा जीत्या ।
 जीतिआ प्रबल माया ॥ ९ ॥ ४४५ ॥

उत्तपति प्रलै दोऊ जीत्या ।
 कहि प्रिथीनाथ ए भारी ॥
 विपम जूझ करि पुरिष होत ।
 तिस घरि रहनि हमारी ॥ १० ॥ ४४६ ॥

जो पद कथ्या योग वासिष्ठ ।
 धरि यहु रामा औतारं ॥
 तिन भी आइर गुर कीया ।
 तिरिवे कूं संसारं ॥ ११ ॥ ४४७ ॥

सहस नाम संकरि कथ्या ।
 ब्रह्मज्ञानं सुपदेवं ॥
 गीता होइ कृष्ण कथी ।
 भगति भजन को भेवं ॥ १२ ॥ ४४८ ॥

वेद होइ ब्रह्मा कथ्या ।
 नारद कथ्या सुकाई ॥
 जिनि उपदेसैं धू भया ।
 प्रगट्या सब जग मांहि ॥ १३ ॥ ४४९ ॥

प्रिथीनाथ नामदेव कऊ कथ्या ।
 क्या बोल्या हणवंत ॥
 जिस करनी तैं^१ पद भया ।
 पिण मैं पहुँता लंक ॥ १४ ॥ ४५० ॥

राजा जनक भया तिनि क्या कथ्या ।
 क्या प्रह्लाद कवीरं ॥
 सो पद काहे ना षोजिये ।
 जिहि ऊधरैं सरीरं ॥ १५ ॥ ४५१ ॥

मारकंड मुनि क्या कथ्या ।
 क्या बोल्या गोरपनाथं ॥
 जिस करणी पूरण भया ।
 तन मन आया हार्थं ॥ १६ ॥ ४५२ ॥

इहै भगति भगवंत वसि ।
 पुरिष भये सब पार ॥
 प्रिथीनाथ अनंत मुनि ।
 इन मैं किन धूं कथ्या सिंगार ॥ १७ ॥ ४५३ ॥

जिस करणी तैं^२ ह्विए ।
 यहु मन तन थैं भंग ॥
 कहि धूं गोविंद कव कीया ।
 पर नारी सू संग ॥ १८ ॥ ४५४ ॥

प्रतग्यां जमुना दर्ई ।
 जाकी वहैं अप्रचल धार ॥

इहै गति^१ करि मानिये ।
 जो घरि घरि कथैं सिंगार ॥ १९ ॥ ४५५ ॥
 चुड़िया मदनं प्रगट कीया ।
 सूता सरप^२ जगाइ ॥
 इन वातनि जत-सत क्यूं रहै ।
 सुपिनैं ही डिगि जाइ ॥ २० ॥ ४५६ ॥
 आंण्या का अंधा जो घात ही न परपै ।
 कानां का बहरा जो सबद ही न दरसै ॥
 हृदा का अंधा जो पुरिस^३ ही न मानै ।
 जिह्वा का गूंगा जो स्वाद ही न जानै ॥ २१ ॥ ४५७ ॥
 बांह का भूठा दान करि पूंटा ।
 पांव का लूला जिनि संत न ठूंटा ॥
 भगति का हीणा जिनि रामं न पाया ।
 जनम वृथा संसार में आया ॥ २२ ॥ ४५८ ॥
 प्रथीनाथ ने थूं ही गया ।
 जिनहिं न पाया भेव ॥
 जे समझ्या ते निस्तरथा ।
 हूवा निरंजन देव ॥ २३ ॥ ४५९ ॥
 चेला दुपी तौ गुरु पीर लाजा ।
 बांह का भूठा न सेयिये राजा ॥
 सबद हीन बिदै तौ पढ़िवा^४ का पोटा ।
 ऊठि बैठि न सकै तौ किस कांभि मोटा ॥ २४ ॥ ४६० ॥
 जौ मरि जाइ तौ जलि जाइ माया ।
 आप न समभया तौ मिध्या यहु काया ॥ २५ ॥ ४६१ ॥
 प्रिथीनाथ कत सेविये ।
 जिनके पासि ग्यांन सच्चुनांहि ॥
 ब्यूं पंथी षाली पढ़ै ।
 अंजड़ नगरी मांहि ॥ २६ ॥ ४६२ ॥
 जे यहु ब्रह्म अषंड पद ।

१-ख. भक्ति; २-क. श्रप; ३-ख. परप ४-ख. पदावा;

तौ मरि मरि काहे जाइ ॥
 जे यहु व्यापक श्रव मैं ।
 तौ क्या तप तीरथ मांहि ॥ २७ ॥ ४६३ ॥
 वन वन हाटैं मुक्ति कै ।
 तौ पसु पपी सैवार ॥
 माया मैं जे डूबिये ।
 तौ जंनक भया क्यूं पार ॥ २८ ॥ ४६४ ॥
 प्रिथीनाथ इतनी वात न त्रिदही ।
 तिन का क्या उपदेस ॥
 कापुरिसां की नारि ज्युं ।
 घर ही माँहे^१ वदेस ॥ २९ ॥ ४६५ ॥
 मल मुत्र तैं यहु तन भया ।
 तन मन हरि मैं सोइ ॥
 जबहीं यह उजल^२ करि लीजै ।
 तवही वसेरा होइ ॥ ३० ॥ ४६६ ॥
 जे मन वसि होइ तौ हरि सौं मेला ।
 हरि भेंटे भगवंत ॥
 जिनि इतनी वस्त विचारी नाहीं ।
 आइ बृथा जे जंत ॥ ३१ ॥ ४६७ ॥
 जैसे तिल में तेल वसत है ।
 काष्ठ भीतरि आगि ॥
 दहून मथि दीपक कीया ।
 तव कछु सूभन लागि ॥ ३२ ॥ ४६८ ॥
 प्रिथीनाथ कहै ते विरला ।
 जे निज जपै समान ॥
 मन मनसा जब एक करैगा ।
 तव दूरि नहीं भगवान ॥ ३३ ॥ ४६९ ॥
 प्रिथी का गुण देह ।
 प्राण गुण सूरं ॥

घाइका गुण स्वास ।
 रहत मन मूरं ॥ ३४ ॥ ४७० ॥
 अनील का जोला ताहि पंच तत लागे ।
 तिनही बसि कीया जे गुर मुपि जागे ॥ ३५ ॥ ४७१ ॥
 कहि प्रिथीनाथ यह अकथ कहांणी ।
 यौ पुनि नांही पाइए ॥
 जिनि यहु भेद न जांणी ॥ ३६ ॥ ४७२ ॥
 यहु मन जीतिहूं यहु मन धरिहूं ।
 धोपा ऊपरि चित न करिहूं ॥
 ज्युं ज्युं आवै त्युं त्युं लैहूं ।
 यन्त्री प्राण पुरिस कौं वांण न दैहूं ॥ ३७ ॥ ४७३ ॥
 प्रिथीनाथ कहै सव सव सत ।
 इस विधि पुरिसा सिव पुरि जंत ॥
 जनम नहीं अंकुर धिन ।
 सड़ या सु जामै नाहिं ॥
 ते क्या जामै वापुड़ा ।
 सदा कल्पना मांहि ॥ ३८ ॥ ४७४ ॥
 जतन करै तो नेड़ा निपजै ।
 सूभर भरिया खेत ॥
 प्रिथीनाथ ते मरि श्रौतरे ।
 जे अंमर सदा सचेत ॥ ३९ ॥ ४७५ ॥
 मन पवन सव जगत कथत है ।
 तत कथे सव कोई ॥
 ए पंचूं^१ आत्मा पंचूं पैडै ।
 इनका कहां बसेरा होई ॥ ४० ॥ ४७६ ॥
 यहु गावै कथे श्रव^२ रस भोगी ।
 बोलत है घट बैसा ॥
 प्रिथीनाथ कहै सुनि रे पंडित ।
 इनका रूप धरन गुन कैसा ॥ ४१ ॥ ४७७ ॥

१-क. पांचूं; २-क. सर्व ।

जे यहु लपै सु गुर का पूरा ।
 भेद हि भाव विचारै ॥
 तिसकी नाव न छूटै हंस डूबे ।
 सदा अपनपौ तारै ॥ ४२ ॥ ४७८ ॥
 सब कोई कहै पंच वस कीजै ।
 बहुरि कहै देह भरोसा नांहि ॥
 इनकै विनसै पंचू आतमां ।
 कहौ पंडित किस ठांइ^१ ॥ ४३ ॥ ४७९ ॥
 तिहि ठांइ पंच बसेरा भांडै^२ ।
 जो अंगम गवंन करि जाएँ ॥
 सबद विहूनां रूप विवरजित ।
 जे^३ पद बीचि बषाणै ॥ ४४ ॥ ४८० ॥
 तार्थै दूरि ब्रह्म^४ क्युं कहिये ।
 जाकै हिरदै यहु रस आवै ॥
 प्रिथीनाथ कहै ते सतगुर ।
 जो यहु भेद बतावै ॥ ४५ ॥ ४८१ ॥
 उपजी होइ तौ मन क्युं भाजै ।
 पांहण लिख्या सु सारं ॥
 मिठ्या भिटै न भीज्या विनसै ।
 असा तत्ता विचारं ॥ ४६ ॥ ४८२ ॥
 गऊ मै पीर होइ पालत भरपूरं ।
 संजम पालै तौ मन कै थीरं ॥
 साधक कुं सेवै तो मुक्ति^५ की आसा ।
 आत्म बिंदै तौ बैकुंठि वासा ॥ ४७ ॥ ४८३ ॥
 कथत प्रिथीनाथ जिनि यहु भेद वृथा ।
 साष्पावंत देवता त्रिभुवन सूझ्या ॥ ४८ ॥ ४८४ ॥
 प्रिथीनाथ बन बन सब जग फिरया ।
 सब कांटे का रूप ॥
 उ फल थिरला पाईये ।
 जार्थै भाजै भूख ॥ ४९ ॥ ४८५ ॥

१-क. बांइ; २-क. भांडहि; ३-क. ते; ४-क. क्रिइन; ५-क. मुक्ति;

पट दरसन पट साखी ।
 इनकौ कलपत ही दिन जाहिं ॥
 स्थिर कोई बिरला रहै ।
 बाकी सबै बहावणि^१ मांहि ॥ ५० ॥ ४८६ ॥
 सब प्रिथी कांटे भरी ।
 अंतरि व्यापै सूल ॥
 प्रिथीनाथ हरि की भगति त्रिन ।
 ते नर वृष^२ बंबूल ॥ ५१ ॥ ४८७ ॥
 साध पुरिष चंदन विडौ ।
 रने बने वै नांहि ॥
 सबै पाय पिण मै कहैं ।
 जे उन मांहि समांहि ॥ ५२ ॥ ४८८ ॥
 हेम होइ जे डेट के ।
 तऊ बानी अधिकारै ॥
 जे होइ साधु कुंटाई ।
 तऊ का महिमा जाई ॥ ५३ ॥ ४८९ ॥
 सब काहू कै पूजि ।
 जुगति अपनी करि ध्यावै ।
 जे यहु मधिम पुरिपा ।
 तऊ देवता कहावै ॥ ५४ ॥ ४९० ॥
 साध पुरिष नित ऊजला ।
 मलिनहिं करैं पवित्त ॥
 साधु^३ पुरिष तिस घरि नहीं ।
 जिनका धोषै बिलंबे^४ चित्त ॥ ५५ ॥ ४९१ ॥
 रामनाम सब कोइ कहै ।
 सब ईश्वर कौ ध्यावै ॥
 दुरगा सब के पुजि ।
 सबै गण गति मनावै ॥ ५६ ॥ ४९२ ॥

१-क. बहावणि; २-क. बिरथा; ३-क. महा; ४-क. बिलंबया;

इनकै जाति भेद कुल नाहीं ।
 पुरिष सबकै उपगारी ॥
 ताही कृं वर देइ ।
 सदा सेवै अधिकारी ॥ ५७ ॥ ४९३ ॥
 धन परचै मैं नाहिं ।
 वेद भागौत वपाएँ ॥
 तिस टांड पुरिष नही मिलै ।
 अधिक चतुराई टांणै ॥ ५८ ॥ ४९४ ॥
 साध पुरिष इनकै जाति कुजाति न पूछिये ।
 पढ़ि मलि ग्रवै^१ कोई ॥
 तिस टांड पुरिष नहिं पाइये ।
 जिनकै घोषा दुविध्या होई ॥ ५९ ॥ ४९५ ॥
 साध साध सब कोई कहै ।
 साध की परपं न जानै ॥
 घोषा टेक न तजै ।
 सबद ही कैसें माने ॥ ६० ॥ ४९६ ॥
 सति वचन पर हरै ।
 भूठ की सेवा लागै ॥
 परपंची की मानि ।
 साधु देष्या उठि भांगै ॥ ६१ ॥ ४९७ ॥
 प्रिथीनाथ ए साध वचन नित ही सुणै ।
 परष नहीं घट मांहि ॥
 घर आए साधहि तजै ।
 घोषा सेवण जांहि ॥ ६२ ॥ ४९८ ॥
 ए बात कथै क्युं साधू मानै ।
 प्रतधि सौं उठि बाँदै ॥
 साधु पुरिष करि सोचै ।
 कोई विसवास न मानै ॥ ६३ ॥ ४९९ ॥
 कोई उठि भगडै लागै ।
 जे बोलै तौ वाकी बात न मानै ॥

अपराणं फिरि करि लावै ।
 धोषा मिटै न मन की छूटै ।
 साध वचन क्यूं पावै ॥ ६४ ॥ ५०० ॥
 साधू कै कछु सोच न संका ।
 डथम आडम्बर नाहीं ॥
 प्रिथीनाथ साध कहा सनमुप ।
 जिनके परप नहीं घट मांही ॥ ६५ ॥ ५०१ ॥
 सवै परप आसांन ।
 साध की परप न आवै ॥
 हीरे हूं की परप न ।
 जुगति जौहरी षतावै ॥ ६६ ॥ ५०२ ॥
 दरिया ही की परप ।
 जहां मोती का बासा ।
 चंद सूर की परप ।
 गहण गति लपी अकासा ॥ ६७ ॥ ५०३ ॥
 रस वास की परप ।
 सो जु यंद्री धरि चापी ॥
 परवत हूं की परप ।
 धात जिनि गुप्ता रापी ॥ ६८ ॥ ५०४ ॥
 जल थल ही की परप ।
 सबहिं न की आई ॥
 सुनि प्रिथीनाथ अचंभ गति ।
 साधि गति लपी न जाई ॥ ६९ ॥ ५०५ ॥
 साध पुरिष चीन्हा नहीं ।
 जे बहि पड़े जंजालि ॥
 परप विहूर्णीं इहै गति ।
 ज्यूं बलि ले दीया पतालि ॥ ७० ॥ ५०६ ॥
 प्रिथीनाथ पुरिष की इहै परण्या ।
 तन मन जीत्यां फिरै ॥
 रहै तो अपराणं पंछया ॥ ७१ ॥ ५०७ ॥
 आराधे कौ साध विरोधे फल दीन्हा ।

छप्पन कोटि आवष्या^१ ॥
 कहा दुरवासा कीन्हा ॥ ७२ ॥ ५०८ ॥
 तिस पै उपाजी इहै ।
 जहां साधू दुप वावै ॥
 जिस पै धोषा घणां ।
 तहां निहचल क्युं आवै ॥ ७३ ॥ ५०९ ॥
 अभिमानी क्युं लपि ।
 जिनि आत्मां न जीती ।
 तव क्या वेदन होत ।
 जब बलि कौं होइ धीती ॥ ७४ ॥ ५१० ॥
 प्रिथीनाथ परप बिन ।
 पढि मति प्रवै कोइ ॥
 जिस टांड साध न संचर ।
 तहां स्वांति कहां ते होइ ॥ ७५ ॥ ५११ ॥
 सोनां की कालिमां ।
 सोनें करि सूझै ॥
 सवद मांहि तत सवद ।
 कहौ धौं कैसें वृझै ॥ ७६ ॥ ५१२ ॥
 वाइ मांहि तत वाइ ।
 कहौ धौं कैसें जाणै ॥
 पांणी मधि करि घृत ।
 कहौ कैसें विधि आणै ॥ ७७ ॥ ५१३ ॥
 तव गोव्यंदहि पाइए ।
 जब या अरथहि काढ़ै ॥
 नहां गावै कथै अधिक ।
 दिन दिन संक्या बाढ़ै^२ ॥ ७८ ॥ ५१४ ॥
 भावै जप तप करै ।
 कोटि तीरथ कौं धावै ॥

१-क. आवष्या ;

२-ख. प्रति में ये दो पंक्तियाँ छूट गई हैं ।

जीवत सती न होइ ।
 जुगति चिन पदहिं न पावै ॥ ७९ ॥ ५१५ ॥
 प्रिथीनाथ परप जब ।
 जघ गुर पूरा होई ॥
 नाहीं तो नर देही नांगां गई ।
 जाकै हिरदै रम्यां न कोई ॥ ८० ॥ ५१६ ॥
 साध पुरिष कै मिलै ।
 भई सुषि अमृत वाणों ॥
 साध पुरिष कै मिलै ।
 गुप्त प्रगट करि जांणी ॥ ८१ ॥ ५१७ ॥
 साध पुरिष कै मिलै ।
 अंध घट दीपक दीया ॥
 साध पुरिष कै मिले ।
 ब्रह्म आपण कर लीया ॥ ८२ ॥ ५१८ ॥
 साधु पुरिष कै मिलै ।
 धू निहचल करि बैसा ॥
 साध पुरिष कै मिलै ।
 मुक्ति का किसा अदेसा ॥ ८३ ॥ ५१९ ॥
 अस्वमेध जज्ञ कीयें ।
 कोटि तीरथ के न्हायें ॥
 इतना तत फल होइ ।
 साध के दरसन पायें ॥ ८४ ॥ ५२० ॥
 साधू वोहित अभै पद ।
 दरसन देष्या पार ॥
 पृथीनाथ दुर्लभ है ।
 उन साधू का दीदार ॥ ८५ ॥ ५२१ ॥
 साध पुरिष कै मिलै ।
 मर्म की संक्या तूटै ॥
 साध पुरिष कै मिलै ।
 ताहि तसकर नहिं लूटै ॥ ८६ ॥ ५२२ ॥

साध पुरिष कै मिलें ।
 दृष्टि बाहिर न आर्यै ॥
 साधु पुरिष कै मिलें ।
 आप आपहि पहिचार्यै ॥ ८७ ॥ ५२३ ॥
 साध पुरिष कै मिलें ।
 दुष दुंदरता भागै ॥
 साधु पुरिष कै मिलें ।
 भरम की सूलि न लागै ॥ ८८ ॥ ५२४ ॥
 साध पुरिष कै मिलें ।
 कृष्ण गति हिरदै बैसी ॥
 साधु पुरिष कै मिलें ।
 कहो दुबिधा मति कैसी ॥ ८९ ॥ ५२५ ॥
 प्रिथीनाथ संगति किन्त्या ।
 त्रिश्राम्यां यहु चित्त ॥
 अंधकार धोपा मिथ्या ।
 तन मन भया पवित्त ॥ ९० ॥ ५२६ ॥
 प्रिथीनाथ साध पुरिष कौ ।
 ते क्या जानें ॥
 धोपा माहें मिलि रहै ।
 और कौ विस्वास न मानै ॥ ९१ ॥ ५२७ ॥
 क्या बहु विद्या पढे ।
 कहा उपदेसै दीन्हें ॥
 यहु सब मिथ्या जांणि ।
 विना साधू कै चीन्हें ॥ ९२ ॥ ५२८ ॥
 सब जग कलपत फिरें ।
 पुरिष का चित्त न डोलै १ ॥
 संसै सूल न रहै ।
 जब मुषि अमृत बोलै ॥ ९३ ॥ ५२९ ॥
 सींचत ही फल देह ।
 विरष के तजे न छाया ॥

तिस ठाँह^१ साध रमै ।
 जहां बाचा सचु पाया ॥ ९४ ॥ ५३० ॥
 दरसन तें^२ पद पाइए ।
 जे बो^३ साधू होत ॥
 जिस ठाहर मन मेलिबो ।
 तहां जगु रहत उदोत ॥ ९५ ॥ ५३१ ॥
 इत उत की द्वै मिलि ।
 साधू के वचन नहिं पंडै ॥
 साधु पुरिष क्या करै ।
 वै आप आपन पौ भंडै ॥ ९६ ॥ ५३२ ॥
 साधू मिलैं थैं साधू होई ।
 उठि करि लागै संगी ॥
 जे समभै तौ दीपक ।
 परप बिन पड़े पतंगा ॥ ९७ ॥ ५३३ ॥
 हिरदै उपजी बिना ।
 साधकों कैसे जोवै ॥
 मन कौ जीति न सकै ।
 सबै पिछले दिन रोवै ॥ ९८ ॥ ५३४ ॥
 प्रिथीनाथ दरसन नहीं ।
 अभिमानी अज्ञांण ॥
 गुरु गोरप चीन्हा नहीं ।
 ते सब भये पपांण ॥ ९९ ॥ ५३५ ॥
 पहिलि संमझि न पड़े ।
 धका लागै थैं जाणै ॥
 बिगड़ी ऊपरि सबै ।
 ताहि ईस्वर करि मानै ॥ १०० ॥ ५३६ ॥
 इहे गति संसार ।
 पुरिष का मरम न पावै ॥
 जे हरि समभया होइ ।
 ब्रह्मा क्यूं बछ चुरावै ॥ १०१ ॥ ५३७ ॥

साध सदा ही मिलैं ।
 मुगध को कहां समझावै ॥
 तव महिमा अति करै ।
 जब विपरीति दिपावै ॥ १०२ ॥ ५३८ ॥
 कलह करामाति पति निधि ।
 साध संताये कोय ॥
 चांपै थैं आगैं पड़ैं ।
 जो पद रह्या अलोय ॥ १०३ ॥ ५३९ ॥
 वक्ता च भवे ज्ञानी श्रुत्वां मोक्ष लभिते^१ ।
 वक्ता श्रुत्वा न ज्ञानामि^२ वृथा तस्य^३ जीवनं ॥

इति श्री त्रिथीनाथ सूत्रधारे मत महापुराणे सिध नाम श्री साध
 परष्या जोग ग्रंथ^४ संपूरण^५

॥ सुभमस्तु ॥

१-क. सुरता मोपि लभते

२-क. वक्ता सुरता न जानामि

३-क. तसि; ४-क. ग्रंथ साखं; ५-क. समाप्तः ;

श्री पृथ्वीनाथ जी का 'श्री निरंजन निरवांन' ग्रंथ (२)

छाया छत्र न सिधि भरोसा ।
 मन पवन छै नांही ॥
 आया पर कछु दूरि न नेड़ा ।
 तिस घर विरला जांही ॥ १ ॥ ५४० ॥
 लघ दीरघ दोइ न्यौली नांहीं ।
 संप पपालै काया ॥
 वाघी करम लंत्रिका साधै ।
 तिन भी तत्त न पाया ॥ २ ॥ ५४१ ॥
 मनसा अग्र व्यंत्र करि पूजै ।
 माला मंत्र धरि ध्यान ॥
 ताली पीटि नासिका चितवै ।
 ए सत्र फोकट ग्यान ॥ ३ ॥ ५४२ ॥
 इन्द्री बंधै पवन निरोधै ।
 कसि बांधै उडियांणी ॥
 संख्या सूत्र ते पद नांहीं ।
 ए वादि बिलोवै पांणी ॥ ४ ॥ ५४३ ॥
 आसण बैसण जोग न होइवा ।
 कर घरि भिष्या पाणां ॥
 पंच अगनि जल साही साधै ।
 धोपा मडै मसाणां ॥ ५ ॥ ५४४ ॥
 इला प्यंगुला सहज सुषमना ।
 रवि ससि दोइन ध्यान ॥
 पंच तत यहु सबद न होई ।
 इंहि त्रिधि जगत भुलानं ॥ ६ ॥ ५४५ ॥
 निद्रा जागै निजपद नाहीं ।
 भूठा वाद विवाद ॥
 पिरथीनाथ कहै तत्र पूरा ।
 सतगुर पद परसादं ॥ ७ ॥ ५४६ ॥
 अकथ अनिद्धर बंधन मुक्ता ।
 पुस्तकि लिष्या न बाणी ॥

देवनि दुरलभ नांहि अगोचर ।
 परचै गुर-सुपि जांणी ॥ ८ ॥ ५४७ ॥
 बाहरि कहौ तौ गुरू न धीजै ।
 भीतरि कहूँ न होइ ॥
 बाहरि भीतरि श्रव निरंतरि ।
 विरला चीन्हत कोई ॥ ९ ॥ ५४८ ॥
 फेरि गहौँ तो अलप अकेला ।
 निराकार निज सारं ॥
 हम बाढ़ी पैसि विसंभर भेटे ।
 द्विष्टि पड़े संसारं ॥ १० ॥ ५४९ ॥
 फूलत फूलत भई फिरि कलियाँ ।
 विरधहूँ वा फिरि वालं ॥
 कहि प्रिथीनाथ हम तिस घरि विलंबे ।
 जहां गोवन रापत ग्वालं ॥ ११ ॥ ५५० ॥
 हम गोपाल हमें गुरू गोचर ।
 हम सुकता हम चेला ॥
 तिस घरि पैसि विचारै आपा ।
 जिस घरि स्यंभ अकेला ॥ १२ ॥ ५५१ ॥
 बकता च भवे हानी ।
 सुरता मोपि लभते ॥
 बकता सुरता न जानांमि ।
 बृथा तसि जीवनं ॥ १३ ॥ ५५२ ॥

इति श्री प्रिथीनाथ सूत्रधरि मत महापुराणै सिधि नाम श्री निरंजन
 निरवाण ग्रंथ ॥ जोग साख समाप्तः ॥ॐ

अथ श्री भक्ति वैकुण्ठ जोग ग्रंथ (३)

वै पंडित कोई और ।
 भगति के भेदहि वृझे ॥
 वै नेत्र कोई और ।
 आदि अंतर गति सूझे ॥ १ ॥ ५५३ ॥
 वै पद औरै जांणि ।
 तास ले तीरथ कीजै ॥
 वै भुजा औरै वांह ।
 काल सिर मृदंगस्कीजै ॥ २ ॥ ५५४ ॥
 वै मुष औरै जांणि ।
 नांव लेता हरि आवै ॥
 वै इनवण कछु और ।
 सबद सुणत पद पावै ॥ ३ ॥ ५५५ ॥
 वाह कछु औरै नांव ।
 जास चढि हत्तर तिरी ॥
 वाह करणी कछु और ।
 जनम करि कवहू न मरी ॥ ४ ॥ ५५६ ॥
 वैह ऐकादशी कछु औरै ।
 जास जागत जम भागै ॥
 वह उपदेस कछु और ।
 करम का काटन लागै ॥ ५ ॥ ५५७ ॥
 वह फासू कछु और ।
 जास पीवैत ल्यो लागै ॥
 वह जीव दसा कछु और ।
 पिंड तजि प्राण न भागै ॥ ६ ॥ ५५८ ॥
 वह मुद्रा कछु और ।
 जास मूंडे सिधि पाई ॥
 इस बिधि जोगहि मिलै ।
 और सब पंथ बताई ॥ ७ ॥ ५५९ ॥
 वह तिलक कछु और ।
 जास दीये गति सोई ।

वा माला कछु और ।
 जास फेरत सुध पाई ॥ ८ ॥ ५६० ॥
 वाह पूजा कछु और ।
 जहाँ कछु देव न पाती ।
 सब तैं भिनि पसाव ।
 तहाँ कुलदेव न जासी ॥ ९ ॥ ५६१ ॥
 वह पटकरम कछु और ।
 जास करतां मल धोवै ।
 वह आचार कछु और ।
 सदा कंटक दुप पावै ॥ १० ॥ ५६२ ॥
 वा गावत्री कछु और ।
 जास जपै सिधि पाई ।
 वा गंगा कछु और ।
 सिध्यां ले ब्रह्मंड चढाई ॥ ११ ॥ ५६३ ॥
 पृथ्वीनाथ ववेक विन ।
 असैं जे जागै ।
 पट दरभ तैं भिनि ।
 पुरिप निपजै तंहां आगै ॥ १२ ॥ ५६४ ॥
 यह अकथ कथा आकार विन ।
 कथैं वंदैं पद तिनि ।
 पद परष्या नैनन कंबल ।
 पुरिप भए के निहन ॥ १३ ॥ ५६५ ॥
 वक्ता च भवे ग्यांती ।
 श्रुता मोषि लभते ।
 वक्ता सुरता न जांनांमि ।
 बृथा तसि जीषनं ॥ १४ ॥ ५६६ ॥

॥ इति श्री पृथ्वीनाथ सूत्रधारे मतमहापुराणो सिध्य नांम
 श्री भक्ति वैकुण्ठ ग्रंथ जोग सासत्र संपूर्ण समापता ॥ ❀

अथ पृथीनाथ जी की सवदी (४)

हंस चह्या साँभर तिरौं ।
स्यंघ चह्या वन मांहि ॥
हस्ती या पर मेल्हि करि ।
मन सौं कूकण जांहि ॥ १ ॥ ५६७ ॥
सोऊं तौ हाथि न आवई ।
जागूं तौ भागा जाई ॥
मन ही सेती कूकणां ।
घाघु हुवा जग पाइ ॥ २ ॥ ५६८ ॥
राजा पाए राज मै ।
अरू पंडित कोटि अनंत ॥
मन का जीत्या बाहरा ।
सब जग देषा जंत ॥ ३ ॥ ५६९ ॥
पृथीनाथ जिनि मन अपनां बसि कीया ।
ताथै षड़ा न कोइ ॥
अटसटि तीरथ कोटि जज्ञ ।
जाकै दरसन ही फल होइ ॥ ४ ॥ ५७० ॥
लोहा की कीमति नहीं ।
जो कंचन कूं चाहै ॥
गोहूं कै काजि तप करै ।
कांठि गाडर कोउ गाहै ॥ ५ ॥ ५७१ ॥
पृथीनाथ पारस सरत्र घटि ।
घट भीतरि लोह ॥
विम्ह भगति क्युं उपजै ।
जिन्हहि विषय का मोह ॥ ६ ॥ ५७२ ॥
पृथीनाथ घर का दंद मै ।
आपु गंवांया जांहि ॥
लादन हारा चलि गया ।
गूंणि रही घर मांहि ॥ ७ ॥ ५७३ ॥
पृथीनाथ रांडी के वांधे मरहिं ।
छाड़ि न सकहीं साथ ॥

गलि घांदर के जेवड़ी ।
 ज्यूं वाजीगर के हाथ ॥ ८ ॥ ५७४ ॥
 जे सम केते भये थिर ।
 अन समझे वहि जंत ॥
 अठसठि तीरथ कोटि जज्ञ ।
 जहां विलं वहिसंत ॥ ९ ॥ ५७५ ॥
 कंवल द्वादस तलैं अग्नि बहु प्रजलै ।
 रवि ससि गत तत भांण जागै ॥
 पहरा रैणि पड़ै काल सेती लडै ।
 पिंड कौ छोड़ि प्रांण कचहूं न भागै ॥ १० ॥ ५७६ ॥
 औसी धरणी धरै सहजहीं निस्तरै ।
 बादक बाद तैं देह छीजै ॥
 गुरु सार्पा कहै सिप सोई गहै ।
 उलटि बांवई श्रप पाया ॥
 पूजि रे भोजिगी* देव आगै बड़ा ।
 रहसि रहसि देहु रै नाद बाया ॥ ११ ॥ ५७७ ॥
 गगन आसणय करै सिवपुरी संचरै ।
 सुनि मै धुंनि तहां नाद वाजै ॥
 अपंड दीपक जरै ब्रह्म गोष्ठी करै ।
 पंच जन वैठा एक छाजै ॥ १२ ॥ ५७८ ॥
 पंच दम मोड़िवा काया गढ तोड़िबा ।
 अह निसा कूजिवा मारि मीरं ॥
 आपकौं मेटिवा ब्रह्म कौं भेटिवा ।
 गगन आसण करि थीरं ॥ १३ ॥ ५७९ ॥ ❀

१-ग, प्रति में 'भोजिग' ।

* ख. और ग, प्रति से । ख. प्रति में पद्य-क्रम भिन्न प्रकार से है, पद्य सं० ६ से ९ तक इसमें अंत में आए हैं ।

१८—बालनाथ जी की सवदी

चहुं दिसि जोगी सदा मलंग ।
पेलै वर कांमिनि इक संग ॥
हसै पेलै रापै भाव ।
रापै काया गढ़ का राव ॥ १ ॥ ५८० ॥
दस दरवाजा रापै बांण ।
भीतरि चोर न देखै जांण ॥
ज्ञान कछोटी बांधै कसि ।
पांचौ इन्द्री रापै वसि ॥ २ ॥ ५८१ ॥
पवन पियाला भपिचौ करै ।
उनमनी ताली जुगि जुगि धरै ॥
रामै आगै लपमण कहै ।
जोगी होइ सु इहि विधि रहै ॥ ३ ॥ ५८२ ॥
अलप बिंद तैं दुनियां उपनी ।
बहुता बिंद तैं पोया ॥
गए बिंद की पवरि न जानी ।
मूये बिंद कूं रोया ॥ ४ ॥ ५८३ ॥
पहली कीया लड़का लड़की ।
पीछै पंथ में पैठा ॥
बूढै पालड़ि भसम लगाई ।
भरथरी वज्र जती होइ बैठा ॥ ५ ॥ ५८४ ॥
तुम्ह हौ पूरा गुरू का सूरा ।
तुम्ह हो चतुर सुजानं ॥
अणचापी ही छोड़ी लपमण ।
चाषी छोड़ौ तौ जानं ॥ ६ ॥ ५८५ ॥*

बालनाथ जी की कुछ अन्य रचनाएँ (२)*

माया सो मन्ता मन्ता सो माया ।
कल्पन्ते काया कठिन जोग पाया ।
खट रस मिठ रस सब रस भोगी ।
विन गुरु ज्ञान फिरै मुढ जोगी ।
ज्ञान नाथ गड़वड़िया प्राण नाथ रोगी ।
सत नाथ नूं यूं कहा संतोप नाथ जोगी ।
अलख झोली खलक खजाना ।
भूख लगे तो माँग के खाना ।
आप दीया सो भी त्यागे माँगन भी जां ।
सत की भीक्षा विचार विचार के खां ।

हो हुंस्यार सरण सतगुर की दिल सावत फीर डरना क्या ।
जोग जुगत से करो जोगेश्वर चारुं कुंठ विचरना क्या ॥

ऊपर को भरै निचे को भरै ।
उस का गोरख क्या करै ।
द्रशनी योगी शिव की काया ।
कह नाथ जी योगेश्वर आया ।
सत की नगरी धर्म का राज ।
बाला जोगी करै आवाज ॥ ५८६ ॥

* कादी मठाधीश आचार्य श्री राजा चमेलीनाथ जी महाराज की कृपा से प्राप्त ।

बाल गुंदाई जी की सबदी (३)*

श्रवधू तुरक कै सूर ज्युं हिंद कै गाई ।
बहन कै भाई त्युं जोगी कै श्रव भाई ॥
सति सति भापंत बाल गुंदाई ।
ये तीन्युं अभप रे भाई ॥ १ ॥
पहलै पहरै सबको जागै ।
दूजै पहरै भोगी ॥
तीजै पहरै तसकर जागै ।
चौथे पहरै जोगी ॥ २ ॥ ५८७ ॥

* केवल ख. प्रति में ही प्राप्त हैं ।

बाल गुंदाई जी की सबदी (४)*

जास माता सीलवती ।
पिता अस्त न भापते ।
तास पुत्र भए जोगेस्वर ।
पुनिरफि जन्म न बिंदते ॥ १ ॥
चहुँ दिस जोगी सदा मलंग ।
पेलै बर कामिनि कै संग ।
हसै पेलै राषै भाव ।
राषै काया गढ का राव ॥ २ ॥
दस दरवांजा राषै वांण ।
भीतरि चौर न देई जांण ।
ग्यांन कछोटा राषै कसि ।
पांचू इंद्री राषै बसि ॥ ३ ॥

ॐ ग. प्रति से । ख. प्रति में प्राप्त बालनाथ जी की सबदी के ६ पद इसमें क्रमशः २, ३, ४, १०, १२, १३ संख्यक पदों से कुछ पाठभेद के साथ मिल जाते हैं ।

पवन पियाला भषिबो करै ।
 उनमनि ताली जुगे जुगि धरै ।
 राम आगें लछमण कहै ।
 जोगी होइ स इस बिधि रहै ॥ ४ ॥
 अवधू सो जो अनभै जानैं ।
 उलटा बाण गगन कूं ताणैं ।
 पलटी बाई बेधीया भूरा ।
 आत्मां जोगी बसि कीया जूरा ॥५॥

पारधी चढीया पोज जु पाया ।
 बोलै बाल गुँदाइ ।
 परचै डोरी गुरुमुप जांणी ।
 सुसैसी हरहाई ॥ ६ ॥

कलिजुग मांही सतजुग थाप्या ।
 उलटी जोत्ति चढाई ।
 भेद विरूणां भिष्ट होइगा ।
 सत्ति सत्ति भाषै बालगुदाई ॥ ७ ॥

वृटी सुरति सब बोदी होसी ।
 बालक अहोसी अलपाई ।
 कलि के तूटे परलै जासी ।
 कदे न मिलिसी भाई ॥ ८ ॥

तुरक कै सूर ही हकै गाई ।
 माता कै पूत वहन कै भाई ।
 जगें जोगी कै सवे माई ।
 सति सति भाषंत श्रीबालगुदाई^१ ॥९॥

अलप वूँद काया उतपनी ।
 बहुत बिद तैं पोया ।
 गऐ बिद की षवरिन पाई ।
 मूऐ बिद कूं रोया ॥१०॥

१ ख. प्रति के प्रथम पद से तुलनीय ।

पहली की एक लड़का लड़की ।
पीछे जोग में पैटा ।
तूटै चमडै भसम लगाई ।
बाल जती होइ बैठा ॥११॥

तुम हो पूरा गुर का सूर ।
तुम हौ चतुर सुजांणां ।
अठाचापी ही त्यागी लपमण ।
चापि रहै तौ जांणां ॥ १२ ॥

यन मन राइ जगत् त्रिनपै लै ।
उंदरि मारि लै बिलाई ।
बिमलौ बिचारौ हो जोगि हो ।
सिध घर सक्ति समाई ॥ १३ ॥

गोरपनाथ गुर सिध बालगुदाई ।
पूछंत कहिबा सोई ।
उनमनि ताली जोत्ति जगाई ।
सिधां घरि दीपग होई ॥ १४ ॥

वैसिबा पदम आसनं ।
अष्टोचरं देषा दस वैठारे ।
सवा घडी रक्त सोपिबा ।
ऐ ग्यांन साधे हो अवधू बालगुदाई ।
तव रहवा पवन भस्त्रिबा बाई ॥ १५ ॥

पद पणं वे पद हरि अवधू ।
पद ले पिंड डा बांणी ।
आकार होइ निराकार देपौ ।
अैसी अनंत सिधां की बांणी ॥१६॥

नांम अछै आकार बिरूणां ।
सतिकृत्तम न लागा ।
त्रिवधि बिदनि लेग निरालंब ।
काल बिकाल दोइ भागा ॥ १७ ॥

वाहरि भीतरि प्रतपि देष्या ।
 सिंध भेद हम लाधा ।
 ब्रह्मा विस्न महेसुर देवा ।
 तिनरूँ गुर करि सीधा ॥ १८ ॥

सक्ति कुंडलनी त्रिभवन जननी ।
 तास किरनि हम पावा ।
 आदि कंवारी जगत की नारी ।
 ब्रह्मा विस्न रुद्र जिन जाया ॥ १९ ॥

सुनंते हम बहरा भईला ।
 देपै तैं जा चंधा ।
 गोरपनाथ पाइ प्रसादे ।
 अमर भेया हम कंधा ॥ २० ॥

आप की अस्थि तिन बोलपं ।
 प्रकी कहै कहांणी ।
 घर ही आछै जा चंधौ भोला ।
 न जाणै रैं निविहांणी ॥ २१ ॥

पंच मुष स्वाद ऐक मुष आणै ।
 न करह तात पराई ।
 ग्यांन विनां धरती नां पडई ।
 ऐक अनेक मुष पाई ॥ २२ ॥

अधिक तत्त ते गुरु बोला ऐ ।
 सम तत्त गुर भाई ।
 हीन तत्त ते चेला बोला ऐ ।
 सत्ति सत्ति भापै बाल (गु) दाई ॥२३॥५८८॥

१६—भरथरो जी का सप्त संप ग्रंथ।(१)

आदि संख का मूलंकार ।
अनली वाई ऊंकार ॥ टेक ॥
पहला संख निरंजन देव ।
पाया ब्रह्म ग्यान का भेव ॥
उलटि उजाई गगन कूं चढ़ै ।
अनभै रहतां पिंड न पड़ै ॥ १ ॥ ५८९ ॥

दूजा संप निरालंभ कथ्या न जान ।
घरि सूरिज चंद कै आन ॥
चंद सूरिज एकै ले बहै ।
तौ इन उपदेसैं क्या रहै ॥ २ ॥ ५९० ॥

तीजा संख विचारह पाया ।
पेचरी मुद्रा त्यागंत माया ॥
माया त्यागौ राषो काल ।
इन उपदेसैं बंचिये जम काल ॥ ३ ॥ ५९१ ॥

चौथा संप संतोष भणीजै ।
द्वादस अंगुल पवना पीजै ॥
पीजै पवना बाजै बंस ।
तौ न पड़ै काया न उडै हंस ॥ ४ ॥ ५९२ ॥

पंचमां संप बांधि लै वाई ।
पटचक्र वेधती आई ॥
पाया कंबल सहस्रदल सुप ।
तो जनम जनम का गया दुप ॥ ५ ॥ ५९३ ॥

छठा संप अकुलीन भणीजै ।
गुर परसादैं सिव सिव कीजै ॥
सिव सिव करि निरारंभ रहीजै ।
इन उपदेसैं जुगि जुगि जीजै ॥ ६ ॥ ५९४ ॥

सातमां संप कंद्रप होई ।
 निद्रा तजी काल कौं जोई ॥
 काल तजी सिव सकती समि रहै ।
 सो जोगी पंचमू आतमां गहै ॥ ७ ॥ ५९५ ॥
 सपत संख का जाणै भेव ।
 सोई होइ निरंजन देव ॥
 सपत संख भएत भरथरी जोगी ।
 थिर होई कंध काया होई निरोगी ॥ ८ ॥ ५९६ ॥ ❀

राग रामंग्री (२)

नहीं आऊं कामंणी नहीं आऊं लो ।
 नहीं आऊं राजभार लेवा तोर ॥ टेक ॥
 एवां नैरांकां कौन बसेपू ।
 मारिवा नांयक जमागं ॥
 हूं तोहिं पूछूं मारहा पढ़िया रे पंडित ।
 काई मरिवा ना लौ लागं ॥ १ ॥ ५९७ ॥
 मन पवन मारहा हस्ती रे घोड़ा ।
 गिनांन ते अषै भंडारं ॥
 बर ले कांमणि षोलै बैठा ।
 तार्थै परा डराऊं ॥ २ ॥ ५९८ ॥
 बूढ़ा था सो बाला हूवा ।
 इव मै काई काई जाणं जी ॥
 सतगुरु सवदूं राजा भरथरी सीधा रे ।
 गुरु गोरप वचन प्रवाणं जी ॥ ३ ॥ ५९९ ॥ †

* क प्रति से । † ग प्रति से ।

भरथरी जी की सवदी (३)

अहंकारे प्रिथमी पीणीं ।
 पहुपे^१ पीणां भौरां^२ ॥
 सति सति भाषंत राजा^३ भरथरी ।
 जीव^४ का वैरी जौरा^५ ॥ १ ॥ ६०० ॥
 सुषिया हसंति दुषिया रोवंत ।
 कीला^६ करंतु वट कांमनीं ॥
 सूरु जूभंत^७ भौदू^८ भाजंत ।
 सति सति भाषंत राजा भरथरी ॥ २ ॥ ६०१ ॥
 दुषी राजा दुषी परजा ।
 दुषी ब्राह्मण वाणिया ॥
 सुषी एक राजा भरथरी ।
 जिनि गुर का सबद परवाणियाँ^९ ॥ ३ ॥ ६०२ ॥
 चढेंगे ते पडेंगे ।
 न पडेंगे तत विचारी ॥
 धनवंत लोग छीजेंगे ।
 तेरा कय जाइगा भरथरी भिष्यारी ॥ ४ ॥ ६०३ ॥
 जोगी^{१०} भरथरी भरमि न भूला ।
 तलि करि डीवी ऊपरि करि चूल्हा ॥
 दोइ^{११} दोइ लकड़ी जुगति करि^{१२} वाली^{१३} ।
 जोगी^{१४} भरथरी जीवै जुग चारी ॥ ५ ॥ ६०४ ॥
 अरवधू जल विन कँवल कँवल विन मधुकर ।
 कोइल बोलै कंठ विना ॥
 थल विन मृघ मृघ विन पारध ।
 एक सर वेधे पंच जना ॥ ६ ॥ ६०५ ॥

१-ग. पहौपे; २-ग. भूंग; ३-ग. राजा जोगी; ४-ग. पिंड; ५-ग. जूरा;
 ६-ग. केला; ७-ख. झूमंत; ८-ख. भूदू; ९-ग. विचाणीयां; १०-ग. राजा;
 ११-ग. दै दै; १२-ग. सू; -ग. जारि; १३-ग. राजा; १४-ख. नव ।

नउ^१ द्वार जड़ि ले कपाट ।
 दसवै^२ द्वारै सिव घरि घाट ॥
 एक^३ लप चंदा दोइ^४ लप मांण ।
 वेधणा^५ मृघ गगन अस्थान ॥
 वेध्या मृघ न छाड़ै पास ।
 भगंत भरथरी गोरप का दास ॥ ७ ॥ ६०६ ॥
 तनि निरास मन मंडै माया ।
 तौ^६ मूंड मुड़ानि भंडसि काया ॥
 मन निरास सकल^७ रस भोगी ।
 कहै भरथरी ते नर जोगी ॥ ८ ॥ ६०७ ॥
 पंच पंडा अधिक बलिवंडा^८ ।
 मनराइ मैमंता गाजै ॥
 विपम^९ लहरि कद्रप की उठे हो सिधौ^{१०} ।
 तहां^{११} कूण कूकै कूण भाजै ॥ ९ ॥ ६०८ ॥
 वैरागी जोगी राग^{१२} न करणां ।
 मन मनसा करि वंदी^{१३} ॥
 अगम अगोचर सिध का वासा ।
 तहां^{१४} आसा त्रिभा बंडी ॥ १० ॥ ६०९ ॥
 मनसां पंडी त्रिदना^{१५} पंडी ।
 मन पवन दोइ उजीरं ॥
 सति सति भापति हो जोगी^{१६} भरथरी ।
 तव मन हुवा^{१६} थीरं ॥ ११ ॥ ६१० ॥
 राज गया कूं राजा भूरै ।
 बैद गया कूं रोगी ॥

१-ख. प्रति में बाहब जिज्ञै चौसठि दृढ़; २-ग. दोउ; ३-ग. ऐक;
 ४-ग. वेध्या; ५-‘ग’ में ‘तौ’ नहीं है; ६-ग. प्रम; ७-ग. बल्यवंता; ८-ख.
 में ‘विधे’ और ‘क’ में ‘करडी’; ९-ग. कद्रप कीनिकसे; १०-ग. तब ११-ख.
 वैराग; १२-ग. बंडी; १३. केवल ख में ‘तहां’ है; १४-ग. आसा; १५-ग. राजा;
 १६-क. कैसे, और ग-‘गोह्वा’;

कंत^१ गया कूं कांमणि भूरै ।
 बिंद^२ गया कूं जोगी ॥ १२ ॥ ६११ ॥
 बीज नहीं अकूर नहीं ।
 नहीं^३ रूप रेघ आकार नहीं ॥
 उदै अस्त तहां कथ्या न जाइ ।
 तहां भरथरी रह्या समाइ ॥ १३ ॥ ६१२ ॥
 मरणै का संसा नहीं ।
 नहीं जीवन की आस ॥
 सति भापंति राजा भरथरी ।
 हमारे^४ सहजै लील विलास ॥ १४ ॥ ६१३ ॥
 निरगुन^५ कथा बहु विस्तार ।
 कथौ निरंजन रहौ आकार ॥
 पूछंत^६ विक्रमंदीत वावन वीरं ।
 कौण परचै रहिवा थीरं ॥ १५ ॥ ६१४ ॥
 सुणि हो विक्रम ब्रह्म गियांन ।
 देह विवरजित धरौ धियान ॥
 उदै अस्त जहां कथ्या न जाइ ।
 तहां भरथरी रह्या समाइ ॥ १६ ॥ ६१५ ॥
 आगै बहनों पीछै भानु ।
 सुरति निरंतरि बृछ तलि ध्यानु ॥
 कथौ^७ निरंजन रहौ उदास ।
 अजहूं न छूटै^८ आसा पास ॥ १७ ॥ ६१६ ॥
 मायां^९ सत्रनी न करसि गरब्यं^{१०} ।
 नहो धन जोवन^{११} जहां होइब्यं ॥
 कनक कांमनी भोग विलास ।
 कहै भरथरी कंध विणास ॥ १८ ॥ ६१७ ॥

१-ग. रूप; २-ख. पूं बिंद; ३-यह पंक्ति केवल 'ख' में है; ४-ख. हमकूं
 नित ही भोग विलास; ५-ग. निरधन; ६-यह पंक्ति केवल 'ख' में है; ७-ग.
 कथै; ८-ग. रहै; ९-ग. छाड़ै; १०-ख. 'मयं सतरंगी नकरी गरब्यं; ११-ग.
 अब; १२-ख. जोबरा; ।

साधिवा एक पवन आरंभ साधिवा ।
 छाड़िवा^१ तौ सकल विकारं ॥
 रहिवा तौ निहिसवद की छाया ।
 सेइवा^२ तौ निरंजन निराकारं ॥ १९ ॥ ६१८ ॥
 कुलहीनं^३ नगनो बाला ।
 मृगनैन रूप दीसंत विक्राला ॥
 झलकंत पद्मं नाग सी बेनी ।
 कतो आगतो सलज्या विहूंनी ॥ २० ॥ ६१९ ॥
 नगनसि काष्ठं नग्नस्य रिपे^४ ।
 नग्नस्य जीव जल चरा ॥
 अजहं काचीस हो मूरपि^५ नरा ।
 नहीं प्रसिधि जोगेस्वरा ॥ २१ ॥ ६२० ॥
 धनिस पुत्री कुलवंती ।
 धनिस्य तूं पतिव्रता^६ ॥
 धनिस्य तू देस देइ ।
 अहं उपदेस मूरिप जोगी ॥ २२ ॥ ६२१ ॥
 रूपांत बाधा गुफांत नागा ।
 अधर^७ सिला डगमगांत ॥
 भरथरी मनि निहचल ।
 घोरि घन वरसंत ॥ २३ ॥ ६२२ ॥
 त्तिण सज्या^८ बनोवासी ।
 ऊपरि अंबर छाया ॥
 भरथरी मन निहचल ।
 घोरि घोरि बरपि हांड इके राया ॥ २४ ॥ ६२३ ॥

१, २-ख. में 'तौ' नहीं है; ३-ग. प्रति में यह पूरा पद इस प्रकार है:—

अलस्यहीनां नगनी य बाला ।

मृग नैन रूपी दृष्टो बिकराला ॥

पद्मो कलकंत वाकस्य बेणी ।

कुनी यागत्या हे लज्या विहूणी ॥

४-ग. रिपि; ५-'मूरपि' केवल ख. प्रति में है; ६-क. पतिभरता; ७-यह पंक्ति 'ग' में नहीं है; ८-ख. त्रिणंत सज्या;

जस्य माता ^१तस्य राता ।
जसि पीवता तसि मरदता^२ ॥
है है रे लोका दुराचारी ।
वैरागी है^३ किंन जाइता^४ ॥ २५ ॥ ६२४ ॥

जस्य माया तस्य जाया ।
तस्य स्युं क्युं रे विपै मुंचाते काया ॥
है है^५ रे लोका दुराचारी ।
निज तत तजि लोहों चाम चित लाया ॥ २६ ॥ ६२५ ॥

काम^६ कलाली चित चडौ ।
सुरै^७ विपै सज्या मनमथ पास ॥
वीरज्यं^८ ब्रह्म हत्या ।
है है रे लोका दुराचारी ॥
कहां रही मुच्या ॥ २७ ॥ ६२६ ॥

अखी जो निदीयते व्यंद ।
कोटि पूजा विनसते^९ ॥
जप^{१०} तप व्रत भजन ।
ब्रह्महत्या प्रदे पदे ॥ २८ ॥ ६२७ ॥

दरसने चित हरनी ।
परसने बुधि ॥
संजोगे बल हरनी ।
कहै भरथरी धिग धिग नारी राकसनी^{११} ॥ २९ ॥ ६२८ ॥

१-ग. ता तस्य; २-ग. मृदंता; ३-ग. कै; ४-ग. जांवते; ५-ग. हा हा ।

६-७-ख. प्रति में क्रमशः इस प्रकार है:—

कामस्य कलाले चितस्य चिदा ।
सुरा विपै सिज्या मनमथ पास ॥

८-ख. वीरजं; ९-ख. विनस्तते, क. विमस्तते; १०-गाठान्तर ग-प्रति:—

भरत भजन तप पंडन ज्ञान हीन तपो नास्ति ।

११-यह पूरा पद केवल 'ख' प्रति में है ।

कुंचील^१ कंथा कुंचील पंथा ।
 कुंचील धरि धरि भोजनं ॥
 कुंचील दाता दया हीणं ।
 कौण जानंत^२ पर वेदनं ॥ ३० ॥ ६२९ ॥
 गोरष बोलै सिरि पड़ा^३ ।
 दुवटा ह्वै पंथ ॥
 एक दिसा^४ कूं वांघणी ।
 एक दिसा कूं नंथ ॥ ३१ ॥ ६३० ॥
 चमड़ी दमड़ी ममड़ी ।
 तीनि बस्तु त्यागी ॥
 सति सति भोपत जोगी भरथरी ।
 ते नाइं रता^५ विरागी^६ ३२ ॥ ६३१ ॥
 नारी चोरी जारी ।
 तीनि बस्तु विवरजित^७ त्यागी ॥
 सति सति भाषंत जोगी^८ भरथरी ।
 ते नाइ रता वैरागी ॥ ३३ ॥ ६३२ ॥
 मोहन बंधिबा मन प्रभोधिवा ।
 भिष्या ते ज्ञान विचारं ॥
 पंच^९ स्या बाति करि एक स्युं राषिवा ।
 तौ यौ^{१०} उतरिवा पारं ॥ ३४ ॥ ६३३ ॥
 पहुप द्विष्टं पलासं च ।
 मूरष बदंत पाडलं ॥
 बादं विवादं न कुरुते नाथं ।
 पालसं तथापि पारुलं ॥ ३५ ॥ ६३४ ॥
 मारौ भूषर साधौ निंद ।
 सुधिनें जाता राषौ बिंद ॥

१-यह क. का अंतिमपद है; २-क. वृक्षंत; ३-ग. परी; ४-ग. दसा ।
 ५-ख. राजा; ६-ग. वैरागी; ७-केवल ख में 'विवरजित' है; ८-ग. राजा;
 ९-ग. प्रति-पंच सूं बात करवा ऐक सूं रहवा; १०-ग. ते ।

जुरा मरण नहीं व्यापै रोग ।
 कहै भरथरी धनि धनि जोग ॥ ३६ ॥ ६३५ ॥
 नादा बिंद वजाइलै दोऊ ।
 पूरिलै अनहद वासा ॥
 एकांतिका वासा सोधिले भरथरी ।
 कहै गोरप मछिन्द्र का दास ॥ ३७ ॥ ६३६ ॥

अथ भ्रथी जी का श्लोक (४)

मंत्री उवाच—

अहौ ग्यांनी महा मूंनी ।
 अष्ट अंग भस्म तन लेप्नं ॥
 किम अरथ कंट माला ।
 कृंण ध्यान हो तपेस्वरी ॥ १ ॥ ६३७ ॥

भरथरी उवाच—

गंगा उपरि कंट हेमघ्री सिला ।
 जहां बैठे पदम आस्नं ॥
 उचरंते ब्रह्म ज्ञानं ।
 सोचंते जोग निद्रा ॥
 मनो माला न जाणो रे राजेस्वरं ॥ २ ॥ ६३८ ॥
 सरीर सूं कोटि क्रमंणां ।
 ब्रह्म करम न लीयत्ते ॥
 जत्र उचरंत नाम ।
 तत्र काल परवरत्तते ॥ ३ ॥ ६३९ ॥

संसारं क्रम बंधनं ।
 क्रम संसारं न लियते ॥
 ब्रह्मा विसन म्हेस्वरं ।
 तेऊ क्रम त्रिटंमते ॥ ४ ॥ ६४० ॥

कंटको पदम नालं ।
 उदिक जल पीवनं ॥
 सुकल केस पासं मजनं ।
 जन विजोग पिंडता ॥

को नृधनी ।
 नृपधि विधातां ॥
 तस्मई विध वसेपा ।
 न टलंत भावनी क्रम रेखा ॥ ५ ॥ ६४१ ॥

मंत्री उवाच—

हस्ते पदमं पगे पदमं ।
 सुप वतीसी त्तसं नृ मलं ॥
 राज हंस सुध त्रासकं ।
 ममो जाणांत जोगेस्वरं ॥ ६ ॥ ६४२ ॥

भरथरी उवाच—

जा दिन उतपति व्यंद् ।
 माता ग्रभेषु नीयते ॥
 ता दिन लिपंते विधाता ।
 हांणि बृधि दुप सुषं ॥
 त्स्मई विध्य वसेपा ।
 न टलंत भावनी क्रम रेपा ॥ ७ ॥ ६४३ ॥

लिपंते त्रिधन लिलाटे पटले ।
 हांणि बृधि दुप सुषं ॥
 त्स्मई विध वसेपा ।
 न टलंत भवनी क्रम रेपा ॥ ८ ॥ ६४४ ॥

मंत्री उवाच—

पीन देह पीन नेत्रं ।
 छिमा दया तस नृभय ॥
 ग्यांन संपूर्णं विद्या सेवनं ।
 ममो जाणंते जोगेस्वरं ॥ ९ ॥ ६४५ ॥

वीर व्यक्रमादीत उवाच—

पीन देह महा पापी ।
 कालो भपिक नृभयं ॥
 तस रण्या न करत व्यंद् ।
 तस कर कंध वेदनं ॥ १० ॥ ६४६ ॥

मंत्री उवाच—

हे हे जोगेस्वरं तापेस्वरं ।
 पूरत्र जनमपु लिप्त येते ॥
 भजै क्युं न राम नामं ।
 व्युं भो भो का पाप दुरंगता ॥ ११ ॥ ६४७ ॥

गिर वैरे गै वरे गता ।
 जो जो जोवन गता ॥
 सरपे पीवंत पवनां ।
 महने भवंत वनां ॥
 पपत कालं नहि चलं मनां ।
 असमय भाव राजेस्वरं ॥ १२ ॥ ६४८ ॥

भरथरी उवाच—

ब्रह्मा जेन कुलाल लालं ।
 अंति बह्मंड तेउ भवते ॥
 विसन जेन दस आतारं ।
 महा संकट ग्रम बासं ॥ १३ ॥ ६४९ ॥

रूदौ जेन कपाल पांती ।
 बुधि भिष्यटण कारते ग्रह ग्रह ॥
 त्मई विधि वशेषा ।
 न टलंत भांवनी क्रम रेषा ॥ १४ ॥ ६५० ॥
 हे हे कुरी कंपटी तूं दीस जोगी ।
 ईस उपर जीवत बटी ॥
 मंडान काली प्रवरत गवनी ।
 अह निस कहणी ॥
 निस भोगी वणी ॥ १५ ॥ ६५१ ॥

मंत्री उवाच—

अहो तूं राजा छत्रपती ।
 विधातो न चतुरदसी ॥
 विक्रम मूरो न तोयं ।
 ऐन भवते तसकरा ॥ १६ ॥ ६५२ ॥

राजा उवाच—

अहो तू बडो जोगी ।
 अरु वौ महामुनी ॥
 कर न भवते तसकरा प्रतळि कंठ माला ।
 देयत सकल प्रथमी ॥ १७ ॥ ६५३ ॥

मंत्री उवाच—

षीन देही षीन दसा तपेस्वरी ।
 षिमां दया तस नृभयं ॥
 महा वित्र ब्रह्म ग्यांनी ।
 ऐ न भवंते तसकरा ॥ १८ ॥ ६५४ ॥

राजा उवाच—

षीन देह सो तो पाप भवेत ।
 कालो भये नृभयं ॥

तिस कारणि छ्यौ जार्यंत ।
कथत सरवस शालिकं ॥ १९ ॥ ६५५ ॥

अथरी उवाच—

राम जेन वितवते ।
पांडु जेन मवली बनोगता ॥
चंद सूर कलंक चटांता ।
त्समई विधिवसेपा ॥
न टलंत भांवनी क्रम रेपा ॥ २० ॥ ६५६ ॥

उलो विलो गना जवि वासरय ।
किम सो दोषणं ॥
त्रा त्रिग बहोप्पा संध न वरसत सो किम दोषणं ।
त्समई विधिवसेपा न टलंत भांवनी क्रम रेपा ॥ २१ ॥ ६५७ ॥

उदित भांण पछिम धृग दसा ।
विदासुंत कंबल प्रवल सिला प्रमुल महेमा जलं ॥
बेणी जाई ते सीतलं ।
त्समई विधिवसेपा ॥
न टलंत भांवनी क्रम रेपा ॥ २२ ॥ ६५८ ॥

षीर विक्रमादीत उवाच—

नृगुण कंथा बहो विसतारं ।
कहो निरंजन बहौ अकारं ॥
कथत व्यक्रम भांवन वीरं ।
कृण प्रचै थिर रह्यो सरीरं ॥ २३ ॥ ६५९ ॥

अथरी उवाच—

अंकुर वीरज नही आकार ।
रूप न रेष न वो अंकार ॥
उदै न अस्त आवै नही जाई ।
तहां अथरी रह्या समाई ॥ २४ ॥ ६६० ॥

किम तांरा चंद्र रवि भूति समि ।
 किम गंगा कूप उदिक जलं ॥
 गज क्रुरंग किसतूरी स्वानं निध ।
 कहा मूरिष कहां पंडिता ॥
 साधू चार न जानामि ।
 तजंत देस दुरंगता ॥ २५ ॥ ६६१ ॥
 तजीए देस दया हीणं ।
 तजीए दुरमुप भारज्या ॥
 तजीए गुरू ग्यान हीणं ।
 तजीए असनेही बंधवा ॥ २६ ॥ ६६२ ॥
 सह रखो सधू सरान्य ।
 गलत जोबन कामणी ॥
 मन मनप्या सैहंत्रीत ।
 तन धन या राग उतिण विनां ॥
 सरवर जल विना रोत्ता दोबेवा हो राजिइ ॥ २७ ॥ ६६३ ॥

प्रधान उवाच —

किम रथ विना रथ हो देव ।

अथरी उवाच—

गृह कूपं महा दुषं ।
 रधर बोहूत्र सटते माया ॥
 सम तारो दीप गनत न जलंते ॥ २८ ॥ ६६४ ॥
 भूसा रोरा सांगिणंता ।
 तवसि त्रटा सुरजादि देव ॥
 प्रहण कते लगभोत्रसु ।
 प्रभवति दिन मेकं सिता ॥
 क्रम सत्रली को समरथा ॥ २९ ॥ ६६५ ॥
 कुल सिहीणी नगनो पै वाला ।
 मृग नैन रूपी दृष्टौ त्रिकाला ॥
 पदम कलकंत नागन सी वेणी ।

कतो या गत्या हे लज्या बहूणी^१ ॥ ३० ॥ ६६६ ॥
 नगनंस्य काष्ठं नगनसि रिष ।
 नगनसि जीव जलचरा ॥
 अजहूँ क चिसरो हो नरा ।
 नहि प्रसिध जोगेसुरा^२ ॥ ३१ ॥ ६६७ ॥
 नही जोग जोगी सरत्र रस भोगी ।
 गुर ग्यांन हीणां फिरो मूढ जोगी ॥
 जोगी चिंता विकल्पौ ममता समाया ।
 कथं जोग जुगता तैं जोगो न पाया ॥ ३२ ॥ ६६८ ॥
 धनसि पुत्री कुलवंती नारी ।
 धनसि तू पतिवरता ॥
 धनसि देससि देवी ।
 अहं उपदेस मुरप जोगी^३ ॥ ३३ ॥ ६६९ ॥

राजा उवाच—

हे हे सिध प्रसिधी दोइ कुल सुधी ।
 कांम चरंती मोह तजंती ॥
 देह कसुधी देह न सुधी ।
 ममो पाटि.....रांणी ॥
 धनि धन्य हे राजकन्या तोहि ॥ ३४ ॥ ६७० ॥
 अक्रोध वैराग जत्र निआंणी ।
 विमा दया जन प्रियसु ॥
 नृलोभ दाता मैसो कर हता ।
 ग्यांन प्रमोधे दस लषण आंणी ॥ ३५ ॥ ६७१ ॥
 मद भारथ केसरि कस्तूरी ।
 राजा बेस्या तपेश्री ॥
 इतना कुल न पोर्जंत हो राजा ।
 जाहर नई गंगा जलो जथा ॥ ३६ ॥ ६७२ ॥
 अस तजि गज तजे राज तजि ।
 तजि सर्षामन को साथ ॥

१. तुलनाय, पद ६१९; २. तुल० पद ६२०; ३. तुल० पद ६२१;

धृग मन धोपै ला तेलै कै ।
 धर्यो पीपै परि हाथ ॥ ३७ ॥ ६७३ ॥
 कूवा जग का जीवणां ।
 बढै सदा वा रोगी ॥
 तातैं निकस्या भरथरी ।
 मीठा लागा जोगी ॥ ३८ ॥ ६७४ ॥
 जिषां न विद्या न तपो न दानं ।
 न चापि सीलं न गुणो न धर्मो ॥
 ते मृत्य लोके भू भार भूवती ।
 मानेप रूपेण मृषा चिरंती ॥ ३९ ॥ ६७५ ॥
 ॥ इति श्री.भरथरी जी श्लोक संपूर्ण ॥❁

भरथरी जी का पद (५)

सिधो इहां कोई दूजा नांही ।
 ग्यांन दिष्टि करि देपण लागा ॥
 हरि है सब घट मांही ॥ टेक ॥
 जल थल मांही जीव जंत है ।
 इन परि दया विचारो ॥
 सब घट व्यापक एक ब्रह्म है ।
 काहू कूं जिन मारौ ॥ १ ॥ ६७६ ॥
 जहां था दोष दया तहां उपजी ।
 सहज सुरति अनुरागी ॥
 गोरष मिल्या भरम सब भागा ।
 सुरति सबद सू लागी ॥ २ ॥ ६७७ ॥

मारि न षाइ भपै नही मृतक ।
 सुरापान नही पीवै ॥
 तंत मंत ठुनका नहिं जानै ।
 सो वैरागी जीवै ॥ ३ ॥ ६७८ ॥

गुर सूं ग्यांन ग्यांन सूं बुध भई ।
 बुधि सूं अकल प्रकासी ॥
 भनंत भरथरी हरि पद परस्या ।
 सहज भया अविनासी ॥ ४ ॥ ६७९ ॥

२०—मछन्द्रनाथ जी का पद^१

राग काल्यंगडौ

भुपड़ली लागी थारा नावनी । म्हानै भावै भावै भगवंत जी रो
 नांवे म्हांरा बाल्हा रे ॥ टेक ॥

जाण जैसी रंग भेटीये । काई भजन भलो भगवंते म्हांरा बाल्हा रे
 ॥ १ ॥

सबही तीरथ मै वसैतो । काइ मंजन करै जन कोई म्हारा बाल्हा रे
 ॥ २ ॥

त्रीमल थाते न्हाई चल्या । काइ एहड़ो पटंतर जोई म्हारा बाल्हा रे
 ॥ ३ ॥

काया तीरथ मै ग्यांन बड़ा । काई साधानौ दरसण होइ म्हारा बाल्हा
 ॥ ४ ॥

भणै रे मछन्द्र ऐहड़ो पटतर । काइ भगवत सवान कोइ म्हारा
 बाल्हा रे ॥ ५ ॥ ६८० ॥

१. श्री डा० सोमनाथ जी गुप्त ने जसवन्त कालेज जोधपुर से १३-२-५१ को भेजा । यह पद जिस पुस्तक से लिया गया है वह जोधपुर की दरबार लाइब्रेरी में है । गुप्त जी ने लिखा है कि “और भी दो एक अन्य हस्तलिखित संग्रहों में इसी प्रकार मिले हैं ।”

राग धनासी

पंपेरु उडि सी । आय लीयौ वीसराम ॥
 ज्यों ज्यों नर स्वारथ करै कोइ न सवाच्यो काम ॥ टेक ॥
 जल कुं चाहै माछली । थण कु चाहै मोर ॥
 सेवग चाहै राम कुं । ज्यौ च्यंवत चंद चकोर ॥ १ ॥
 यो मारथ को जीवडौ । स्वारथ छाड़ि न जाय ॥
 जब गोप कीरया करी । म्हारो मनवो समग्यो आय ॥ २ ॥
 जोगी सोइ जांणी रै । जगतै रहै उदास ।
 तत नीरंजण पाइया । यों कहै मछंदर नाथ ॥ ३ ॥ ६८१ ॥

२१—महादेव जी की सबदी*

गगन मन छाकि^१ लै ।
 त्रिविध टुप काटि लै ॥
 थाकि लै बल^२ पंच भूतं ।
 हरि रस पागि लै^३ ॥
 जनम भै भागि लै ।
 भाषंति सति सिव अवधूतं ॥ १ ॥ ६८२ ॥
 सिव संति गुरु कृपा ये माणिक लामि लै ।
 रोकि लै बहतरि थानं ॥
 साधि लै उयांन घाटी ।
 जोग जुगति करि पट चक्र छेदि लै ॥
 भेटि लै ब्रह्म कपाटी ॥ २ ॥ ६८३ ॥
 हाजरा कुं हजूरि ।
 गाफिला कुं दूरि ॥

❁ इस सबदी के सिर्फ ९ पद्य क प्रति में हैं ।

शेष पद ख और ग प्रतियों में हैं ।

१-ग. बाकि; २-ग. बाला; ३-ग. पाकिलै;

विरला जाणंत^१ निज तत ज्ञानी ।
 मुसक नाभी वसै^२ ।
 मृगा^३ पत्रि ना लहै ।
 भाषंत सिव सति वाणी ॥ ३ ॥ ६८४ ॥
 अरध उरध सों पुष्ट^४ करीजै ।
 संपड़ी नाली वाई भरीजै ॥
 माठी हेठै करू तन जाई^५ ।
 भणै^६ सदा सिव जीवण उपाई ॥ ४ ॥ ६८५ ॥
 जिह्वा^७ इंद्री येकै^८ नाल ।
 जे राषै^९ ते^{१०} बंचै काल ॥
 बोलंत ईस्वर सति सरूप ।
 तत बिचारै तौ रेप न रूप ॥ ५ ॥ ६८६ ॥
 अजपा जपै सुंनि मन धरै ।
 पांचूं इंद्री निग्रह करै ।
 ब्रह्म अगिन मै होमै काया ।
 तास महादेव बदै पाया ॥ ६ ॥ ६८७ ॥
 वेद हीन ब्रह्मा करम चंडाल^{११} ।
 अह्वानी^{१२} जोगी पृथी^{१३} का भार ॥
 अबोध राजा की न कीजै सेव ।
 सति सति भाषंत श्री महादेव ॥ ७ ॥ ६८८ ॥
 सिव निरमाइल^{१४} ब्रह्म रस ।
 चंडी धन जे पाई ॥
 इस्वर बोलं पारवती ।
 तीनों रुमुला^{१५} जाई ॥ ८ ॥ ६८९ ॥
 धारा घाटा घटरस ।
 मीठै बाढंत रोग ॥

१-ख. नंत; २-ग. बहै; ३-ख. मृधा; ४-ग. तैं पृष्टि; ५-ग. कूं कू
 उपाई; ६-ग. भनंत । ७-ग. जिभ्या; ८-ग. ऐको; ९-ग. जो रषै; १०-ग.
 सो; ११-ग. चहार; १२-ख. अज्ञान; १३-ख. पृथमी; १४-ख.
 नृमाइल; १५-ख. नृमुला;

ईसुर बोलत पारवती ।

येता थी निरालंभ जोग ॥ ९ ॥ ६९० ॥

धरम अस्थान बहू जात करम ।

छाड़ौ अबधू चित भरम ॥

चीया चेतनि मनि हित करि वाणि ।^१

संकर बोलत संजम वाणि^२ ॥ १० ॥ ६९१ ॥

आसण दिढ़ करि वैस जांणि ।

जाधित निद्रा थिति परवाणि ॥

अहार द्यौर जुगति कर जाणि ।

संकर बोलंत संजम वाणि ॥ ११ ॥ ६९२ ॥

चंद्र मंडल मथे सूरियो^३ संचारि ।

काल विकाल आवता निवारि ।

उनमनि^४ रहिवा धरिवा धयान ।

संकर बोलंत सहज^५ वाणि ॥ १२ ॥ ६९३ ॥

डाल^६ न मूल पत्र न छाया ।

स्वर्ग^७ मृत्यु^८ पाताल एक ही काया ॥

प्यंड^९ ब्रह्मांड एक^{१०} करि जांणी ।

संकर बोलंत अतीत वाणी ॥ १३ ॥ ६९४ ॥

इन्द्री का जती मुप का सती ।

हिरदा का कमल मुक्ता ॥

ईश्वर बोलंत^{१२} पारवती ।

ते जोगी जोग^{१३} जुक्ता ॥ १४ ॥ ६९५ ॥

देता ही जो सत करै ।

लेता करै संतोष ॥

१-ग. जाणी, २-ग. वाणी । ३-ग. पवन; ४-ग. जागृत निद्रा धित
प्रवांणी; ५-ख. सुपया; ६-ख. डाल मूलं पत्र न छाया; ७-ग. सुरग;
८-ग. मृत; ९-ग. पिंड; १०-ग. सोसम; ११-ग. बोलैत; १२-ख. जोग
न जुक्ता; १३-यह पद केवल ग प्रति में है ।

ईश्वर भाषंत पारवती ।
 ये दून्युं पावै भीष ॥ १५ ॥ ६९६ ॥
 *च्यारि वांणी का च्यारि भेद ।
 रुक जुज स्यांम अथरवन वेद ॥
 जुगति जोग करि जोगी तपै ।
 संक्र अह निसि अजपा जपै ॥ १६ ॥ ६९७ ॥
 घृत पांड गीहूँ इअत भोग ।
 तहां सिर जालै चौष्टि रोग ॥
 नभ तलि अगनि प्रजलै न ऊगै भान ।
 ताते संसार का मरन प्रवान ॥ १७ ॥ ६९८ ॥
 जल अर्मल भरा लै नल ।
 संसार सूं क्युं न रहै रो कल ॥
 मन मस्त हस्ती जाति बादल ।
 भनंत सिव तत्र यहाँ ता अस्थल ॥ १८ ॥ ६९९ ॥
 नव नाडी सो भरि ले मली ।
 अगनि न बलै नाभी की तली ॥
 चंद न सोपै सूर न करै ।
 गिर ही पहली अवधू मरै ॥ १९ ॥ ७०० ॥
 मन मैं नीचा मधिम करम ।
 सुष बपानैँ उत्तम धरम ॥
 भनंत इश्वर कलिजुग की गति ।
 तातैं न कही रो सति असति ॥ २० ॥ ७०१ ॥
 पहुप दृष्टतु पलासं ।
 मूरिपो वदंत पालं ॥
 बाद विवाद न करतवां
 पाडलंत तथा पाडलं ॥ २१ ॥ ७०२ ॥

२२—मीड़की पाव जी की सबदी

प्यंड^१ चलंता सब^२ देपै ।
 प्रांण चलंता विरला^३ ॥
 प्रांण चलंता जे नर देपै ।
 तास गुरु में चेला ॥ १ ॥ ७०३ ॥
 कहां बसै गुरु कहां बसै चेला ।
 कृण^४ पेत्र कहां^५ मेला ॥
 असा ज्ञान कथौ रे भाई ।
 गुरु सिप की कृण^६ लपाई ॥ २ ॥ ७०४ ॥
 अरधै बसै गुरु मधि^७ बसै चेला ।
 तृकुटी पेत्र उलटि तहां^८ मेला ॥
 अनहद सबद भईउ लपाई ।
 गुर मुपि जोति निरंजन पाई ॥ ३ ॥ ७०५ ॥
 काया कंचन मन कस्तूरी ।
 सो ले गुरु कूं दीजै ॥
 अपंड मंडल^९ मदी छाइवा ।
 जुरा मरण नहिं छीजै ॥ ४ ॥ ७०६ ॥
 ॐसिधा गड़वड़ छाड़ि दे ।
 अनहद प्याला केल ॥
 वूँद समानी समंद मैं ।
 सो वुँद ले पेल ॥ ५ ॥ ७०७ ॥
 पीर भंडारै परपिये मन मेलू रंमता ।
 जती सती का पटंतरा ॥
 लाभै धिर रहंता ॥ ६ ॥ ७०८ ॥

१-ग. पिंड; २-'क' में 'को' अधिक; ३-ग. अकेला; ४-ख. कौण; ५-
 ग. कैसे; ६-ख. कौण्ड; ७-ग. मधे; ८-ख. केवल 'उलटी'; ९-ग. सुनि
 मंडल मैं;

ॐ यह पद केवल ख. प्रति में है ।

राति गई अधराति^१ गई ।
 बालिक एक पुकारै ॥
 है कोई नम्र^२ मैं सूरि वां ।
 बालक का दुष निवारै ॥ ७ ॥ ७०९ ॥

— — —

२३—रामचंद्र जी की सबदी

अग्नि कुंड समो नारी ।
 घृत कुंड समो नरा ।
 जंघ जोडि प्रसंगांनं ।
 क्यूं तौ मत्त निहचल रे लपमणांः ॥ १ ॥ ७१० ॥

— — —

२४—लपमण के पद

मेरै मनि आया बहुरि अदेसा ।
 सो मैं सेया सबद बसेषा ॥ टेक ॥
 इहां कलु और उहां कलु और ।
 कूण मुपि निरषाहो ।
 वृष्णि कहत है लपमण बाला ।
 गुह्नि महाराजि बतवौ ॥ १ ॥ ७११ ॥

* 'ग' प्रति से ।

१-ख, अधिरात; २-ग. नम्री ।

अधिक पाठ ग. प्रति
 ग्यांनी सो जो ग्यांन मुप रहई ।
 मेटि पंच का आसा ॥
 उर अंतर उनमनी लगावै ।
 अगम गवन करे बासा ॥

इहां उहां ऐक करि जांणौ ।
 आपा मंझै प्यछांणौ ।
 जो तुम धाला बूझ करत हौ ।
 तौ सवद मुपि निरताणौ ॥ २ ॥ ७१२ ॥
 कैसा सवद कहौ महाराजा ।
 बाई सवद हौ तेरा ।
 इंद्रया वोऊं आदि लूं माया ।
 तीनों लोक अंधारा ॥ ३ ॥ ७१३ ॥
 जो पिंडे सो ब्रह्मंडे ।
 करद सवद चित लावौ ।
 पिड़की पोलि दवा दस उपरि ।
 संधे तत मिलावौ ॥ ४ ॥ ७१४ ॥
 इला पिंगुला सुपमनां ।
 ऐ काया की लार ।
 कहै रुवनाथ रचल्यो वाला ।
 रज वीरज की धार ॥ ५ ॥ ७१५ ॥ ❀

२५—लालजी का पद

हूं बलिहारी सुगुणां जोगीया रे लाल ।
 म्हारी काया नम्र को राव ॥ टेक ॥
 मूल महल पिड़की लगी रे लाल ।
 गगन गरजि जाई ।
 सुनि सिपर रा तषत पर रे लाल ।
 म्हारौ जुगियौ रह्यौ रे लुभाई ॥ १ ॥ ७१६ ॥
 त्रिन वादल वीज अनंत रे लाल ।
 सित्र सक्ती मेलग मया रे लाल ।
 जहां नित्ति नबला नेह ॥ २ ॥ ७१७ ॥

अरध उरध भाटी चिगै रे लाल ।
 जहां धर न लगाई धार ।
 पंच सपी प्याला देवै रे लाल ।
 जहां सहज मडी मत्तिवार ॥ ३ ॥ ७१८ ॥
 इला पिंगुला संगर मै रे लाल ।
 सुपमनि नैत्रति घोर ।
 मतिवाला घूमत रहै रे लाल ।
 जाकी लगी अलप झू डोर ॥ ४ ॥ ७१९ ॥
 गया दिवानै देसडै रे लाल ।
 रखा दिवानां होइ ।
 आपण पौनही जाणीयौ रे लाल ।
 जहां दिल की दुरमति धांइ ॥ ५ ॥ ७२० ॥
 सुंदरि सुपमनि जोगीयौ भोगवै रे लाल ।
 जाकूं सुनि सिपर कौ चाव ।
 विकट पंथ वैडा मता रे लाल ।
 मेरे सत गुर दीया वताइ ॥ ६ ॥ ७२१ ॥
 जोग जुगति सूं पेलणां रे लाल ।
 सिपरां तंवू तणांइ ।
 टीक लगाई टीकरै रे लाल ।
 उलटि त्रिवेणी न्हाइ ॥ ७ ॥ ७२२ ॥
 द्विद्या वेद पावै नहीं रे लाल ।
 कथै न कतेत्र कुरांणं ।
 टीकर तौ टावौ कीयौ रे लाल ।
 पावै कोई संत मुजान ॥ ८ ॥ ७२३ ॥

२६—सतवंती के पद

गहीयौ बाला सति सवद सुप धारा ।
 गगन मंडल चढ़ि प्रीतम प्रसौ ।
 रूप वरन तें न्यारा ॥ टेक ॥
 धरता कूं करता मति मानौ ।
 सति को सवद चितांऊं ।
 अत्र लग मरम लह्यौ नही मेरौ ।
 गुज्ज वीज कहि जांउं ॥ १ ॥ ७२४ ॥
 हम भी माया तुम भी माया ।
 माया रावन राधौ ।
 जे तु बाला वृझ करत हौ ।
 तौ सुसवेद सूं लागौ ॥ २ ॥ ७२५ ॥
 सुसमवेद का भेद निराला ।
 च्याहूं बेद विकारा ।
 जिन अक्षर सूं साइर पाटा ।
 सो सवकां करतारा ॥ ३ ॥ ७२६ ॥
 तीन लोक अर भवन चत्रदस ।
 रचया काल का चारा ।
 साध सवद हृदैं धरे लीज्यौ ।
 ऐती नौवट पारा ॥ ४ ॥ ७२७ ॥
 अवनि धसंती यूं सति भापौ ।
 रापौ तोप तुम्हारा ।
 सुप सागर मैं सहजि मिलौगे ।
 सति प्रनांम हमारा ॥ ५ ॥ ७२८ ॥
 किती ऐक बेर भया ऐ चिंहनां
 कोई जन जानैं या गहर गती ।
 इच्छा वोऊ आदि लूं माया ।
 यूं सति भापै सतवंती ॥ ६ ॥ ७२९ ॥

२७—सुकुल हंसजी की सबदी

देवल देपंता पंडिता देवल पड़हड़िसी ।
 राजा देपंतां रिणवासं ।
 गुरू चेला प्रतपि वाद होसी ।
 पुत्र न मानिसी माइ बापं ॥ १ ॥ ७३० ॥
 दिपण पड़हड़िसी गगन गरजसी ।
 पूटसी गंग जमन का नीरं ।
 बारा बारा जोजन उपरि नग्री बससी ।
 आंवला प्रवांन भिण्या होसी ।
 जती सती कोइ बिरला सथीरं ॥ २ ॥ ७३१ ॥
 जब मही आवटसी कूरम टलसी ।
 पूटसी राजा नृपति के बीजं ।
 चंद्र सूर दोउ राह प्रससी ।
 तव पूता भणीवा रात्री न दिवसं ॥ ३ ॥ ७३२ ॥
 उतिर दिसाथै अहूठी कोठि दल मल मिलि चालिसी ।
 अरु राजा का अनंत पारं ।
 राजा इंद्र विसूक का आसण थरहरसी ।
 सिध बुधि करिसी विचारं ॥ ४ ॥ ७३३ ॥
 विमल विचारि गिर कंदलि पेंसिवा ।
 सुकुल हंस भाषंत ते डंसं ।
 चीया चेतन दोइ सम करि मेलिवा ।
 उड़ी न जाइसी प्रमहंसं ॥ ५ ॥ ७३४ ॥

२८ — हणवंत जी का पद (१)

(राग—रावंगरी)

तत असा लो तत असा लो ।
 किम करि कथं गंभीरं ॥
 निराकार आकार विवरजित ।
 सति भापै हणवंत वीरं ॥ टेक ॥

द्विष्टि न मुष्टि न अगम अगोचर ।
 पुस्तकि लिष्या न जाई ॥
 जिहि पहचाना सोई जानै ।
 कहतां को न पत्याई ॥
 बाहरि कहूं तो सतगुर लाजै ।
 भीतरि कहूं तो भूटा ॥
 बाहरि भीतरि श्रव निरंतरि ।
 सतगुर सवहूं दीटा ॥
 मीन चलै चलि मधि न जीवै ।
 नाद रूप बस कैसा ॥
 पहुप वासनां कछू न दरसै ।
 परम तत है ऐसा ॥ १ ॥ ७३५ ॥

आकासां उड़ि चढे विहंगम ।
 पीछै पोजन दरसै ॥
 बाल जती हणवंत यूं प्रणवै ।
 कोई विरला हरि पद परसै ॥
 तत बेली लो तन बेली लो ॥
 अलष विरप विलवैली ।
 बाड़ी विरह बीज निज बाह्या ॥
 भगतहि जाइ रहैली ॥ टेक ॥
 अमी कुंड सौं धोए बांध्या ।
 अमरा कूल भरली ॥

चेतनि पांण ति प्यांउंन लागा ।
 अंवर छेकि वधेत्ती ॥
 पेड दिसा थै पावक पोपै ।
 सैली अमी पीवैली ॥
 रूप रेप ताकै कछु नाहीं ।
 वप विन मृग चरैली ॥
 जिनिही कमाई तिनिही पाई ।
 सहजै फूलि रहैली ॥
 वदंत हणवंत बाला रे अवधू ।
 एक अमर फल देली ॥ २ ॥ ७३६ ॥

राग आसावरी

बाघणि लो वट पाड़ी लो ।
 हेत करे घट भीतरि पैसे ॥
 सोपिले बैन बनाड़ी लो ॥ टेक ॥
 जे जन जांनि रहै रहता सौं ।
 मैं तिनके बन्दौ पाया लो ॥
 कामणि मीनी जिनि जिनि त्यागी ।
 तिनके अपिल सरीरा लो ॥
 सतगुर सबहूं जे जन चालैं ।
 तिनकूं प्रणवै हणवंत वीरा लो ॥ ३ ॥ ७३७ ॥ॐ

हणवंत जी की सबदी (२)

वकता आगैं सुरता होइवा ।
 धीग देषि मसकीनं ॥
 सिध कै आगैं साधक होइवा ।
 यौ सति सति भावंत हणवंत वीरं ॥ १ ॥ ७३८ ॥

वेद पढ़े पढ़ि ब्रह्मा^१ मूवा ।
 पढ़ि गुणि भाटन गारी ॥
 राज करंता राजा मूवा ।
 रूप देषि देषि नारी ॥ २ ॥ ७३९ ॥
 कथता तौ कथि^२ गया ।
 सुरतां सुणि गया^३ ॥
 नृमल रहि गया^४ थीरं ।
 कोई येक वीर विचपण पारि उतरैगा ।
 यूं सति सति भाषंत^५ श्री हणवंत वीरं ॥ ३ ॥ ७४० ॥
 चंचल था ते निहचल हूवा ।
 गुर के^६ सबदां-थीरं ॥
 परम^७ जोति आकासि बसाई ।
 यूं सति सति भाषंत श्री हणवंत वीरं ॥ ४ ॥ ७४१ ॥
 मगरधज वृद्धै^८ हो बावा हणवंत वीरं ।
 काया का कौण विचारं ॥
 अठसठि^९ तीरथ घट ही भीतरि ।
 बाहर लोकाचारं ॥ ५ ॥ ७४२ ॥
 चलै मीन जल पोज^{१०} न दीसै ।
 गगन विहंगम रहिया^{११} ॥
 सिध का मारग कोई साधू^{१२} जाणै ।
 और सब दरसणी बहिया ॥ ६ ॥ ७४३ ॥
 करतूती करतार है विचि ही^{१३} ।
 बिण करतूति पहुँचा ॥
 विधनां रची विधै है जेती ।
 गुर बाइक के अवधूता ॥ ७ ॥ ७४४ ॥

१-ग. पंडित; २-ख. कथे; ३-ख. रह्या; ४-ग. रहैगा; ५-ग. भाषै;
 ६-ग. का; क. के सबदां ७-ग. धूम; ८-ग. पूछै; क. वृद्धै ९-ग. अठसठि;
 १०-क. ख. न दरसै; ११-ख. रहिबा; १२-ग. विरला; क. साधू ही;
 १३-ख. दरण । १४-क. ख. क्रिय करता रहे बोचि ही ।

वकता सुरता मरि मरि जास्यो ।
 रहिता रहस्यौ थीरं ॥
 सार का चणां कोई विरला चावै ।
 सति सति भापंत श्री हणवंत वीरं ॥ ८ ॥ ७४५ ॥
 ❀ अटसठि तीरथ जाकै चरणां ।
 सोई देव तुम्हारे अंतह करना ॥
 हणवंत कहै मन अस्थिर धरणां ।
 बाहरि कितहू भटकि न मरणां ॥ ९ ॥ ७४६ ॥
 पंथ चलै चलि पवनां टूटै ।
 तन छीजै तत जाई ॥
 काया तैं कल्लु दूरि बतावै ।
 तिसकी मूझौ माई ॥ १० ॥ ७४७ ॥
 देह अंतर करौ रे अवधु ।
 देह अंतर क्या छीजै ॥
 हणवंत कहै देह तरक करता ।
 कारज सगला सीजै ॥ ११ ॥ ७४८ ॥

हणवंत जी का पद (३)

बाघनि लो रे बाघनि लो ।
 बाघनि है बटपाड़ी लो ।
 हेत करै घट भीतरि पैसे ।
 सोपि लैवै नौ नाड़ी लौ ॥ टेक ॥
 जिंद भी सोपै बिंद भी सोपै ।
 सोपै सुंदरि काया लो ॥ १ ॥ ७४९ ॥
 जे जन जानि रहै रह तासूं ।
 मैं ताका बंदौ पाया लो ।
 बाघनि मीनी जिन जिन त्यागी ।
 ताका अपै सरीरं लो ।

ते नर जोनि कदे नहीं आवै ।
सत्ति सत्ति भापंत हणवंत वीरं लो ॥ २ ॥ ७५० ॥

असा लो रे तत असा लो ।
किम करि कथूं गंभीरं लो ।
निराकार आकार विवरजित ।
यूं कथंत हणवंत वीर लो ॥ टेक ॥
दिष्टि न मुक्ति न अगम अगोचर ।
पुस्तग लिपा न जाई रे लो ।
जापरि कृपा सोई भलि जानै ।
कह्या न को पतिआई रे लो ।
बाहरि कहूं तो सतगुर लाजै ।
भीतरि कहूं तो भूटा रे लो ।
बाहरि भीतरि सकल निरंतरि ।
सतगुर सबदां दीठा रे लो ॥
मोन चलै जल माघ न दीसै ।
रूप वरन है कै साले रे लो ।
पहोप वास ज्यूं रहै निरंतरि ।
प्रम तत है असा रे लो ॥ ३ ॥ ७५१ ॥

आकासां उडि चलै विहंगम ।
पीछै षोज न दरसै रे लो ।
बाल जती हणवंत यूं प्रणवै ।
निज तत विरला प्रसै रे लो ।
तत बेली लो तत लेली लो ।
अलष विरष बिल मेली लो
बाड़ी बीज विरह निज बाह्या ।
गगनां जाइ रहेली लो ॥ टेक ॥

अमी कुंड सूं घोरा बांध्या ।
अभरा कूप भरेली लो ।
चेतन पांणत्ति पांवरण लागौ ।
अंबर छेदि बधेली लो ॥ ४ ॥ ७५२ ॥

(१२६)

पेड दिसा तै पावक पोष्या ।
सेली अमी चवेली लो ।
रूप वरण वाकै कछु नाहीं ।
वप बिन मृघ चरेली लो ॥ ५ ॥ ७५३ ॥
निजही कमाई तिन भल पाई ।
सहजै फूलि रहेली लो ।
षदंत हणवंत बोल्या रे अवधू ।
ऐक अमर फल देली लो* ॥ ६ ॥ ७५४ ॥

— — —

* ग प्रति में "सिधां का पद" शीर्षक देकर कई योगियों के पद संगृहीत हैं । उनमें हणवंत के नाम के ये पद हैं । इनमें से कई पद स्वल्प पाठान्तर के साथ क प्रति में पाए जाते हैं जो ऊपर संगृहीत हो चुके हैं ।—सं०

परिशिष्ट—१

श्री परवत सिद्ध का कह्या भूगोल पुराण

ओअं अगमु जरि वाइ विसिनु जडि सूरजु मडलिओ । सति उत्पति आदि अविगति ते अंकासु उत्पन्निओ । अंकासु ते वाइ उत्पन्निओ । वाइ ते तेजु उत्पन्निओ । तेज ते ब्रह्मंडु उत्पन्निओ । ब्रह्मंड फुटि गुटिका भइओ । तेज के मधि विसनु रहिआ । तिसुन के मधि ब्रह्म रहिओ । सो ब्रह्म वाइ कीओ । पचासी कोट जोजन प्रिथमी प्रवाण है । चउरासी लाख जोजनु सुमेरु पर्वत ऊंचा है । सोलह सहस्र मधि गडिआ है । बीस सहस्र ऊपरि त्रिधि विस्थारु है । तिसु सुमेरु पर्वत ऊपरि अष्ट खिंग है । भिन्न-भिन्न हैं । एकु लाख जोजनु आपस मधि अतरा है । एकु एकु सिङ्ग का कउणु कउणु सिङ्ग है—मालवंत सिङ्ग है । ऊचवंत सिङ्ग है । हेमवंत सिङ्ग है । प्रमाथुं सिङ्ग है । लीलावतुं सिङ्ग है । सन्तवतुं सिङ्ग है । गुपूप्रदान सिङ्ग है । महारसु सिङ्ग है—ऐसे अष्ट सिङ्ग हैं ॥

प्रिथमी प्रमान - सुमेरु पर्वत ऊपरि सुवर्ण मई है । कैलास समुंद्र है । बड़ा राजा है । गणरत्न विछु है । मनं है । पारजात कवलात गज विराजता है । वैकुण्ठ में पुनीत है । प्रधान पडदे एक है । एते सुमेरु पर्वत दखिन दिसा आगै जबू विछ है । तिसु विछ का केता कु कु विधि विस्थारु है । एकु लाखु जयूं का विधि विस्थारु है । तिसु विछ के हस्ती प्रवान फल है । सो फलु पुनीत धरती प्रवाह चलता है । सो प्रवाह मानसरोवर जाता है । सो सफलु पुनीत है । तिसु फल कीआं, जल कीआं नदीआं बहतीआं हैंनि । आगै जमवंत पुरी है । सर्व पापी बसते हैंनि । असंख जन्म के । जो जनु जल अब मर्जनु करै काइआ सुवर्ण की होइ जाइ । प्रिथमी ऊपरि आगै खंड हैं । कउन कउन खंड है:—केतमाल खंड है । भार्थ खंड है । नीलविछ खंड है । रामि खंडु है । हरिआन खंडु है । कुरंजल खंड है । किसिनु खंड है । फिलमिल खंड है । गिआन खंडु है । एते नउ खंड—प्रिथमी प्रवान है ॥

प्रियमी ऊपरि आगै दीप है। कउन कउन दीप है—पउछल दीप है। सलमल दीप है। जंवू दीप है। कुमुम दीप है। पुस्कर दीप है। कुरंचल दीप है। संगला दीप है। तिनका पिबरा कितनाकु है—त्रै लख जोजन जवूं दीप का विधिविस्थारु है॥ खारा समुद्र पर वसियता है। चउरासी लख जोजनु संगलदीप है। मधि समुन्द्र पर वसिटाता है। धारहकोट जोजन कुरचंजलदीप है। रूप समुन्द्र विसिटाता है। बीस कोट जोजन कुसदीप है। दुध समुन्द्र पर विसिटाता है। चालीस लाख जोजन संगलादीपु है। दधि समुन्द्र पर विसिटाता है। संगलादीप के उपरि गरुड़ का दुआरा है॥ आगे समुन्द्र है—कउणु कउणु समुन्द्र है—खारा समुन्द्र है। ईख समुन्द्र है। मधि समुन्द्र है। रूपस समुन्द्र है। सेत समुन्द्र है। खीर समुन्द्र है। दधि समुन्द्र है। एते सप्त समुन्द्र हैं। प्रियमी प्रवाणः—कुरंभ की पीठ ऊपरि संसार है। तिस कुरंभ का विधि-विस्थार केता है—दोइ कोट जोजन कुरंभ की मूछा है। पचास कोटि जोजन कुरंभ की पीठि है। एक कोट जोजन कुरंभ का मस्तकु है। दुइ कोट जोजन कुरंभ के नेत्र हैं। एक कोट जोजन कुरंभ का मुख और माथा है। सति कांठ जोजनु कुरंभ की जीभ है। चारि कोट जोजनु कुरंभ के चारों पग हैं। दस कोट जोजन कुरंभ का अंगुली है। सपति कांठ जोजन कुरंभ ऊंचा है। एकुअर्ब प्रियमी ते दूणा है। तिस कुरंभ का मुख पूर्व दिसा में है। तिस कुरंभ का पग चारउ दिशा है। पूर्व पछमु उत्तरु दखिनु। तिस कुरंभ की प्रिष्टि ऊपरि अष्ट द्विगजन (विगज) है। कदी जेकरि कुरंभ उलटै तउ प्रियमी का नास होइ जाय। एते कुरंभ प्रवान है। पुनी च पुनीरीक बैठे हैं। तिनकउ निरंजनु पुरीपु अहार देता है। सर्व भूमिके प्रिपालिक हैं। इकु लाख जोजनु ऊचे हैं। अठारह कोट जोजन उनका विधि विस्थार है। दो कोट जोजन उनका सुरिकि है। तीस कोट जोजन उनके दंत हैं। अैसे त्रिगिजन बैठे हैं। प्रियमी की रछापाल करते हैं तिसु कुरंभ के मुख मस्तकि ऊपरि शेषनाग बैठे हैं। सहस्रं फन है। दोइ सहस्रं नेत्र हैं। पंद्रह कोट जोजन एक एक मस्तकि का विधि विस्थार है। तिस शेषनाग का मुख सदा हरि हरि होता है। तिसु शेषनागके मुख मस्तकि ऊपरि महा बैराहु बैठा है। प्रियमी कउ देखता है। अनन्त मूरति है। तिस महा बैराहुके आगे एह प्रियमी माटी लगी है। प्रियमी ऊपरि आगै पर्वत चले—

उदि अंचल पर्वत है। हिव अंचल पर्वत है। रत अंचल पर्वत है। बुध अंचल पर्वत है। सुत अंचल पर्वत है। दानागर पर्वत है। मालीगर पर्वत है। खिखै पर्वत है। एते सप्त पर्वत प्रियमी प्रवाण ॥ जेते समुद्र तेते पर्वत। पर्वतों की गति समुद्र प्रलय होयगा ॥

सुमेरु पर्वत ऊपरि चारि दिशा चारि पुरीआ हैन। कउणु कउणु पुरी—कउणु कउणु दिसा है। पूर्ध दिशा आगै ऊपरि—प्रियमी ऊपरि चउवीस सहस्र जोजन अंम्रितपुरी उची है। तहाँ राजा इंद्र राज करता है। त्रेतीस कोट देवते हैं। अठासी हजार सहस्र भूषीसुर हैं। दखिन दिशा आगै प्रियमी ऊपरि। पचीस सहस्र जोजन जमपुरी ऊची है। चउसठ सहस्र जोजन सर्वसा है। पछिम दिशा आगै प्रियमी ऊपरि विआलिस सहस्र जोजन ऊसिकापुरी ऊची है। ऊपरि वसता है। तहाँ राजा सुमेरु राजु करता है। सूरजु उद्यंचल ऊपरि उदै होता है। अस्ताचल ऊपरि अस्तु होता है। सूरज चलते ही सिख्या दोइ सहस्र जोजन एक निमिष महि सूरज चलता है। आगे पुरीआँ पाँच अउर हैं। कउण कउण पुरी हें—त्रेतालीस सहस्र जोजन उलका पुरी का विधि विस्थारु है। पचास सहस्र जोजन जमवंतपुरीका विधि विस्थारु है। अठासी सहस्र जोजन अचलपुरी का विधि विस्थारु है। सत्रह सहस्र जोजन महिआनकपुरी परि मध्यान करता है। सूरजि जमपुरी पर अधिमान करता है। सूरजु मध्यानपुरी मधि रात करता है। तहाँ रोमचलित्र ऋषीसर कल्पमानु होता है। निताप्रति एक रोम अंगे ते दूता है।

एक लाख सूरि उदे होता है। तदि लाल सिष्टि कउ नजर आवती है। जय सूरज चलता है तातो अकांस प्रमाण है। नउ असंख अठितालीह पदम अठितालीस नील चउतीस षरव उनहत्तरि अर्ब स्तानवै कोड्डिड पंचीसलाख पचानवे सहस्र पचासलाख जोजन धरती अंकास का अंतरा है। गुहिज असिथान का बेवरा कितनाकु है—प्रियमी ते चारि जोजन मेरा (मेरु) मंडलु ऊपरि है। अंम्रितधारा सदा बरिषता है। मेघमंडल लोक ऊपरि एक लाख जोजन सूरजलोक है। बियाली सहस्र जोजन सूरिज लोक का विधि विस्थारु है। सूरज लोक ऊपरि एक लाख जोजन चन्द्रमालोक का विधिविस्थारु है। चन्द्रमालोक ऊपरि एक लाख नछत्र लोक है। पचीस सहस्र जोजन का नछत्र लोक

का विधिविस्थारु है। नद्यत्र लोक ऊपरि एक लाखु मंडलोक है। तीस सहस्र जोजन मंडलोक का विधिविस्थारु है। सोम लोक ऊपरि एक लाख जोजन सुक्र लोक्कु है। उणासी सहस्र जोजन सुक्र लोक का विधिविस्थारु है। सुक्र लोक ऊपरि एकुलाखु जोजन वृहस्पति लोक्कु है। अठासी सहस्र जोजन वृहस्पति का विधिविस्थारु है। वृहस्पति लोक ऊपरि एकुलाखु जोजनु बुध मंडल है। तीस सहस्र जोजन बुध मंडल लोक का विधिविस्थारु है। बुध मंडल लोक ऊपरि एकु लाखु जोजन सुख मंडल लोक है। अठासी सहस्र जोजन सुख मंडल लोक का विधिविस्थारु है। सुख मंडल लोक ऊपरि एकुलाखु जोजनु राह मंडल लोक है। अठासी सहस्र जोजन राह मंडल लोक का विधिविस्थारु है। राह मंडल लोक ऊपरि एकु लाखु किरेत मंडल लोक है। सोलह सहस्र जोजन किरेत मंडल लोक का विधिविस्थारु है। किरेत मण्डल लोक ऊपरि एकलाखु जोजन किसन लोक है। चउसठ जोजनु किसन लोक का विधिविस्थारु है। किसन लोक आगे राहु कितना कूं दित्ता है। किसनलोक ऊपरि एक लाखु जोजनु सप्तऋषीसुर हैं। भिन्न भिन्न है। एकु लाखु जोजनु विसनु मण्डल लोक ऊपरि प्रान अंकार है। सु निरंकारु है। तहाँ श्रीनारायण बैठे हैं। पउण्णु सरूपा वसते हैं। देवते रद्धिया करते हैं। शव्द सुनते हैं। परु अखों देखते न है। अमीजल अंचवते हैं। तहाँ गति कउन पावते हैं। अकालमधि अखंड मूरति है ॥ १ ॥ ४४७ ॥

॥ इति श्री भोगलुपुरान समाप्तं ॥



परिशिष्ट २

शब्दार्थ

अंप=आँख

अंपिडितं > अखंडित

अंधारा > अन्धकार

अउहाट = औहट, औघट, कुघाट

अफल = फला-रहित, जिसकी फलना न हो सके

अकुलीन = कुलीन का उल्टा, शिव

अक्रिता > आकृति

अर्क चितली=आक और चितली नाम के वनौषध

अर्क = आक, अकवन

अपह = आँख का

अजरावर > अजरामर

अडौ = अड़गया

अणपूट = अनखूँटी, अनटूटी

अणचापी = जो चखी न गई हो ।

अणपरचै = अपरिचित

अथवै = अस्त होता है

अदलि = न्याय

अनली बाई = अन्य वायु

अनहद } अनहद, अनाहत ध्वनि
अनहदयु }

अनिच्छर > अक्षर, अविनाशी

अवाह > अ-वायु

अवीह = अवेध्य

अवेक्ष > (१) अवेध्य, (२) अभेद्य

अभपे > अभक्ष्य

अभेवं > अभेद्य, जिसका भेद या रहस्य ज्ञात न हो ।

अमली = नशावाला

अर = और

अरभवन = अर + भवन = और घर

अलिप वक्ता > अल्प वक्ता

अलोय > अलोप

असम = असमान

असरालं > असरार, भेद, रहस्य, द्वन्द्व

असोभ = अशुद्ध, अपवित्र

अस्थान > स्थान

अस्त्री > स्त्री

अस्थंभना > स्तंभन

अहला } = था
अहिला }

अहूठा = साढ़े तीन

आहैनि > हैं

आइस > आयसु > आदेश । 'आदेश' नाथ योगियों का संभाषण है ।

आक > अकवन

आप = आखा, पूरा, समूचा

आप्ते } = कहे
आप्ते }

आछे = है

आडा = तिरछा, टेढ़ा तिलक

आडाडंबर = आडंबर, घटाटोप

अम्हे = मैं

आदिमेर > आदिमेरु

आपणपौ = अपनापा

आपा > आत्मा, आप

आपौ राष्यां = खुद रक्षा करने से

आयसं > आयसु, आदेश

आरंन > अरण्य, वन

आरोगता > आरोग्य, नीरोग होना

आलै = आलवाल में ?

आब = पानी, चमक

- आवटसी = आवर्तित होगी, घूम जाएगी
ईछा > इच्छा
इंद्रया > इन्द्रिय
इग्यारी = एकादशी
इला = इड़ा नाड़ी
उंचरते = कहते हैं
उंनधि > (१) उन्नति, (२) उन्मत्त
उछंचल > उच्चंचल, अत्यंत गंचल
उजाई } > उद्यान, ऊपर की ओर चढ़ना
उजोणी }
उजोरं > वजोर
उडियांणी = (१) उड़ी, (२) इड्डियान बंध
उतपनी > उत्पन्न
उतिण > उत्तार्ण
उदबीरन्न > उद्भिन्न
उदि अंचल > उदयाञ्चल
उद्रपात्र > उदर पात्र, पेट
उनंथ गो छिलो > उन्मत्त था
उनमनी > मनोन्मनी-श्रवस्था, समाधि
उन्मान > अनुमान
उपनी > उत्पन्ना
उपाधि = टंटा, फ़साद
उन्नट बटा > उद्धर्त वर्त, ऊन्नड़ खान्नड़ या टेढ़ा मेढ़ा रास्ता
उसारना > उत्सारितव्य, उलीचना
ऊधा = औधा
ऊधरै > ऊर्ध्व
ऊभा = खड़ा
ऊलो विलोग ना = उलू विलोकता (देखता) नहीं ।
ऊसिका = उसका
ऐकलडौ = अकेला
एकोकार = एक मात्र ओंकार
एकोतर > एकोत्तर, एक अधिक

ऐती—इतनी

ऐन > (१) अयन, (२) ये नहीं

ऐहड़ो = ऐसा

कंकार > (१) कंकाल, (२) ककार

कंतरि > कान्तार, बन (में)

कंयड़ी }
कथी } कथा

कंदलि > कंदल (मूल), जड़ में

कंध > स्कंध

कउणु = कौन

कचोला = कटोरा

कटकई > कटक, सेना

कटाली = कटारी

कड > कृत

कतेव > किताब, धर्मग्रंथ

कतो आगलो = कहाँ से आया

कदी }
कदे } = कभी

कचलास > कैलास

कच > (१) कण, (२) कर्ण

क्रम > कर्म

क्रमणां > कर्मणा

कृप = कृपा

कृसुधी > कृशधी, दुर्बल मतिवाला

करंग > कुरंग, मृग

करद सवद = व्यष्टि में प्रतिबिम्बित शब्द

करन > करण

कलकत > कलकांति, सुन्दर

कलाल = मद-विक्रेता

कळ > कलौ, कलिकाल में

कल्पमानु = एक कल्प प्रमाण

कल्यों = कल्पित किया

फलाली > मद वेंचनेवाली स्त्री
फवारी > कुमारी
फाड़थ्रा = फव
फाई = कैसे, क्यों
फाकण फार = पैसा बटोरनेवाले
फाचसि = फष्ट पाता है
फातिस = फातर होता है
फादोर=फादर, फातर
फायारा = शरीरका
फिंगर > फिंकर
फितनाकु = फितने ही
फिनथू = फिन से
फिन अरथ = किस कार्य के लिये, क्यों
फिरेत=कृतकर्म
फिसी = कैसा, फिसे,
फीघा > कृत, फिया
फीला > कीड़ा
फीरया > कीड़ा
कुंचील > कुचैल, मैला (२) क्वचित् (?)
कुंती = से
कुतवालं = फोतवाल
कुठाल = कुठार
कुरंभ = कूर्भ
कुरतै > कुरुते, करता है ।
कुरी > कुल, समूह
कुलक = एक औषधि, कुचिला
कुसदीप > कुशद्वीप, कुशस्थल नामक द्वीप
कुसमुपला=कुश का जड़ ?
कूण > (१) फोण (२) = कौन
कूकै = बोलता है
कूचा = सँकरा मार्ग, गली
कूजिमा = बोलना

कूर > क्रूर
केतमाल > केतुमाल, जंबूद्वीप का एक खंड
केल = (१) किया, (२) केलि
केसीसूत्र ?
कोथली = कोठरी
क्रोड़ी } = करोड़
क्रौड़ }
षदू काल > क्षयकाल
पंडू = खंडित करूं
पंडै = खंडित करता है
पंदाया = खोदवाया है
पंध > स्कन्ध
पड़हड़िसी = भहराकर गिर जाएगा
पंडौत्ति = खंडित करता है
पपत = खपता है
षपरइँ = खप्पर
षमिया = क्षमा
परतर = खरतर, तेज
पंडं > खण्डन
पंणौ > खंडे
षांड = खाँड़, चीनी
षांड़ा > खज्ज
षांड़ी > खंडिता
षाईं > क्षय
षालड़ि = खाल, चमड़ा
षास्या } = खाएगा
षास्ये }
षिण > क्षण
षिमां > क्षमा
षिमिया > क्षमा
षीणी > क्षीण
षुध्या > क्षुधा

पुनी > खूनी

पूटसी = कम हो जाएगा, नष्ट हो जाएगा

पूटा = (१) खूटा (२) टूटना

पूटै = टूटता है ।

पेचर > खेचर, आकाश में चलनेवाला, (२) खेचरी मुद्रा

पेत्र > क्षेत्र

पेदनं > खेद पहुँचानेवाला, नाशक

खेड़ } > खेट, गाँव, खेड़ा
पेड़ }

पेलणां = खेलना

गंजि = बाजारमें

गंठि = गाँठ में

गडिआ है = गड गया है ।

गडीला = गड़ गया

गथा = पूंजी जमा किया

गभै = गमता है, अनुभव करता है ।

ग्रवै = गर्व

गरवा > गुरु, भारी, कठिन

गरव्वं > गर्व

गरास > ग्रास

गहरगती = गंभीरगति वाली

गहीयौ = ग्रहण किया, पकड़ा

गांडर < गड्डुल, भेड़

गाही > ग्राही

गिरवैरे > गिरिवर

गैत्र = हाथी

गिरही > गृही

गुफि > गुह्य, गोप्य

गुटिका = गोली

गुदरै = (१) गूदड़ी (२) अलग हो जाता है

गुर नै = गुरु ने

गुह्यज=गोप्य

गूंडा=चूर्ण

गूणि > गुण, गोन, रस्सी

गूफ < गुह्य, गोप्य

गो = रे (संवोधनार्थक अव्यय)

गोहाचक्र > गुहाचक्र

गोहिश्रो=छिपाया

ग्रमे > गर्भे

ग्रहने > ग्रहणे

घंटी = गले के श्रंदर की घंटी, फौआ

घाटा=चट्टा

घात=हिंसा, मारना

चक्रमण=चलना-फिरना

चत्र = (१) चार, (२) चतुर, (३) चित्र, विचित्र

चत्रकंठ > चित्रकंठ

चन्द्रस > चतुर्दश, चौदह

चवेली > (१) च्युत होती है, (२) कहती है

चमाऊँ=चाम की जूती

चष्य > चक्षु

चिहना=चीत्कार करना

चिगै=(१) चुगता है, चुनता है; (२) चुआता है

चितांड > चित्ताण्ड

चिरकट=चिरकुट, चिथड़ा

चीत > चित्त

चीति > चित्त (में)

चीतावरं > चित्राम्बर, चित्रित वस्त्र

चीया = चेता

चुंडा > चूड़ा, चोटी

चौगिरदे = चोरो तरफ

चौबारै = चारों ओर (चतुर्द्वार)

चौधि = चौंसठ

चंपवत् = चूता हुआ

व्यासं=चारों

छछंद > स्वच्छन्द

छादस > षोडश, सोलह

छाफि = तृप्त होकर, छुफ कर

छाजै=शोभता है

छिअ > (१) छूता है, (२) छीजता है

छिलो = था

छीजै=छीजता है, घटता है ।

छेक=छेद

छेरी=चकरी

जंत > (१) यंत्र, (२) जन्तु

जमागं > यमाग्रं=यम के सामने

जमल संप > यमल सांख्य, द्वंदज्ञान

जमारं > यमद्वार

जरांग=जरा, (वृद्धावस्था) का शरीर

जलतन=जल विपयक

जारछ्या > जलाता है, जीर्ण करता है

जारज > जरायुज

जाहरनई ?

जिषां > येषां = जिनका

जिदंभिद = जीवन और वीर्य

जीअ > जीव

जीवडौ > जीव, जियरा

जुरा > जरा, वार्धक्य

जुगतै = युक्ति से

जूरा = जरा

जेकरि = जिसका

जेअई = रस्ती

जौरा = जरा (बुढ़ाया)

भिरकित =

छुरकट = } योगियों का पात्र

छुरे = चिन्ता करता है

टमकली = टिटिम्मा, ठाटबाट
टलंत = टलता हुआ
टांमा > ताम्र, लाल
टाकर = ताकता रहता है
टूकर = टुकड़ा
ठटा = ठाट
ठावौ = स्थिर करो, स्थापित करो
ठाहर > ठहरने का भाव
ठीकरै = ठिकरा
ढची = ढिन्ना, पात्र
ढालाह ?
डिंभरे > दंभर
डिगम्बर > दिगम्बर
डींगा = डींग
डीवि = पात्र में
ड्यंभ > डिभ
ढील > शिथिल, ढीला
तंबा > तंबू
तपिंगुला = तपस्वी
तपीस = तप करता है
तलदंत पटी = नीचे के दांतों की कतार
तेणह = तृण
त्रटा = त्रुटित हुआ
त्रुकुटी > त्रिकुटी, भ्रूमध्यस्थान
त्रिवेणी = त्रिकुटी के पास का स्थान
तस्महँ > तस्मै, उसके लिये
तिण > तृण
तिनकड़ > तृणकृत
तिरलो = पार किया
तुंड = चौंच, मुख
तुलाई = रुई की बनी हुई (मुलायम)

तेवण } वैसा
तेवो }

तोट > √जुट्

थंभा > स्तंभ

थाकिलै = रहा

थाई = स्थित हुई

थारा = तुम्हारा

थिति > स्थिति

थिरंतां = स्थिर होने पर

थेगली = सहारा

थोइवा = रखना

थोहर = थूहर, वनश्रीधि-विशेष

दहूँ = (१) दुहूँ, दोनों (२) धौं, न-जाने

दवादस > द्वादस

दरसन } दर्शन
दरसन }

दहून=दोनों

दाणा > दानव

दानागर = दाना चुगानेवाला, भुक्तिदाता

दानू > दानव

दिपन > दक्षिण

द्विष्टि न मुष्टि न = न दृष्टि का विषय, न मुष्टि का; अदृश्य-अप्राप्त

दिवानां = (२) पागल, मत्त (के)

दिसंतरी = देशान्तरी

दीदारी = दर्शन

दीस > दृष्ट

दुंदरता, > द्वन्द्व-रत

दुतर तिरौ = दुस्तर (समुद्र) को पार किया

दुतिया > द्वितीय

दुरंगता > दूरगंत

दुरमुष > दुर्मुख

दुवटा = दोनों

दुहेला = विकट खेल, कठिन काम
 देवता में दानू = देवता-न-दानव
 देवल = देवालय

देसड़ा } = देश
 देसड़ा }

दोषखं > दूषणम् = दोष
 दोभक > दोजल, नरक
 दोषपटी > दो पाटी

दोहेवा = दुहना
 धंघ = द्वन्द्व, दुनिया धंधा
 धमाल = धमार
 धर > धरा, पृथ्वी

धुह > ध्रुव

धृग > धिक्

ध्रू > ध्रुव

धंग > धिक्

धीनै = विदवार कीजिए

धीप > दीप

धूमि > धूम (में)

धीलाघर > धवल गृह, धवरहर, ऊँचा मकान
 नथ > नथ

नग्र > नगर

नथाइला = नाथे गए,

नटाटंवर > नटाडम्बर, नट का सा वस्त्र धारण करनेवाले

नवड़ा = निवेरा, लुटकारा, त्राण

न्यौली > योग की एक क्रिया

नवला = नया

नवानै = (१) वाढ़ हट जाना, (२) नवान्न

नसी = नष्ट हो जानेवाली

णेराथान = न्यारा स्थान

नाइरता > न्यायरत

नापीला = नष्ट किया, गिरा दिया

नाजाक > नाजुक

नाटी वेदी = छोटी वेदी

नाड़ > नाटा, छोटा

निआंणी = न्यारी

निष्पत = निर्द्वन्द्व ?

निखुट = निर्दोष

निगन > नग्न

निपत्री = उत्पन्न हुई

निपाया = उत्पन्न किया

निनारत = न्यारा, पृथक्

नियति = माया का वह आवरण जिससे असीम ससीम दिखता है।

निरति > वृत्तियों का अन्तर्निरोध

निरतागौ > निरति-योग का साधन करो

निरमाइल > निर्माल्य

निरालंभ > निरालंब

निरावल = साफ किया, निराया

निरेआ > निरय = नरक

निस्तर्या = पार कर गया

निसपति > निष्पत्ति

निसप्रेही > निःस्पृह

निसासड़ > निःश्वास

नीडा } > निकट
नेडा }

नृदंदं > निर्द्वन्द्व

नैवति = नौबत, मंगलवाद्य

नैरति > नैर्ऋत्य (फोण)

पंपि > पत्नी

पंपि = पंख या पंक नामक योगी, संनदाय-विशेष

पंपी } पत्नी
पंपेरु }

पंछे = पीछे

पउणु > पवन

पथा=पथ
 पछाणिया } =ग्रहचान
 पछाणो }
 पटंतरा } समानता
 पटंतरै }
 पट्टरौल > पट्टवख
 पट्टेरा=दूसरे का
 पडदार=परदार, परस्त्री
 पणि=प्रतिज्ञा
 पणि छाड़या=प्रतिज्ञा छोड़ी
 पत्याई=विश्वास करे
 प्यछायौं=ग्रहचान
 प्यंगुला < पिंगला (नाड़ी)
 प्यंड > पिंड
 प्रग्रिह=परिग्रह
 प्रचै > परिचय
 प्रत्तपि } > प्रत्यक्ष
 प्रतच्छि }
 प्रतग्यां > प्रतिज्ञा
 प्रभोधिवा=प्रबोध कराना, बगाना
 प्रम > परम
 प्रमुल महेमा=विपुल महिमा
 प्रवरत > प्रवृत्त
 प्रवाण > प्रमाण
 प्रसै = स्पर्श करता है
 परचा } =परिचय
 परचो }
 परचै }
 परजालै=प्रज्वलित करता है
 परभेदी=परपक्ष का भेदन करनेवाला
 परबोधलो=प्रबोधित किया
 परवरतते > प्रवर्तते, प्रवृत्त होता है
 परवाणियाँ > प्रमाणित

परिसाधूँ > प्रसाद (से)
पवनरी थित = पवन की स्थिति
पसुवा > पशु
पसाव > प्रसाद
पहुंता > पहुंचा
पहुप, पहुँप > पुष्प
पांगल=पागल
पांडु = पीला
पाइक > पदातिक, पैदल, सेवक
पाटण=शहर
पाट पटोला=बहुमूल्य वस्त्र
पाडलं > पाटल, पुष्पविशेष
पाड़ी > पालि, किनारा
पातिग > पातक, पाप
पाथरिस्ये=विच्छाएगा
प्रान अकार > प्राणाकार
पारष > परीक्षा
पारप्रामी = पारगामी
पारध=बहेलिया
पालं } पालन
प्रालं }
पालंग्यड़ा=पलंग
पावड़ी=पैरकी
पाहू = पत्थर
पिंगुला > पिंगला (नाड़ी)
पिछानं=पहिचान
पिटरका=पिटारा (पेटरूपी)
प्रिथमी > पृथ्वी
प्रिपीलिक > पिपीलिका, चींटी
पिसण > पिशुन, कपटी
पुनीच > पुनीत
पुरात्रिस्ये=परोसेगा

पूर्वा = पूर्ण हुआ

पैसा = प्रवेश किया

पौल } वौरि पर, द्वार पर
पौलि }

प्रभू = परीक्षण

प्रग्रह > परिग्रह, दानग्रहण

फटकीआ = रखोर लिया

फाँकी > फक्किका

फासू = मादक द्रव्य (ताड़ी ?)

फोटीला = नष्ट हुई

फुनि > पुनः

फुरै > स्फुट होता है, स्फुरित होता है ।

फुरण > स्फुरण

फोक = व्यर्थ

बंगं = (१) धातु विशेष, (२) वक्र, टेढ़ा

बंचियै = बांचिप

बँटवा = बटुआ, थैला

बंवूल > बवूल (वृद्ध)

बंस > वंश

बग्गा > बल्गा, लगाम, बाग

बगोध्यानी = बक की भाँति ध्यान करनेवाला कपटी

बल्लु > बत्सनाग (श्रौपथ)

बज्रजती > बज्रयति

बटपारा = बटपार, छुटेरा

बदेस = विदेश, बुरा देश

बनपंडी > बन में रहनेवाला

बनाड़ी = बनवासी

बनिता = (१) बने हुए, (२) स्त्री

बवेकी > बिबेकी

बमेक > बिबेक

बयार = वायु

बयंद > बिंदु, शुक्र

- व्यंज > विंज
व्यक्रम > विक्रम
ब्रह्मं > ब्रह्मा
वरणा > वरुणा
वरतण्णि=आचरण
वलिबंडा=बलवान्; दुर्घर्ष
वस्त > वस्तु
वसेष > विशेष
वहनी > भगिनी
वहावण्णि=बहानेवाली
वहिसंत > विहसंत
बहौड़ी = लौटना
वांवर्ह=विल में
वाइ व > वायव्य (कोण)
बाई > वायु
वाकल > बल्कल, आवरण
वाघी > व्याघ्री
वाड़ी > वाटिका
बादंतै=बदन्तै, कहने से
बाद > वाद
वादि=व्यर्थ
वायबो=बहना
बारै=(१) जलाता है, (२) निछावर करता है
बारी > वाटिका
बावै = बहता है,
बासरय = दिन में
बाहुडौं = बहुरूँ, लौटूँ
विधं > विधि, प्रकार
विदं > विंदु, शुक
विगूता = असमंजस में पड़ा, नष्ट हुआ
विगोवै = गँवाना, व्यर्थ में खोना
२

- विचक्षण > विचक्षण
विद्युद्द्वै = विद्युद्धता है
विद्वन् > विद्वान्
विद्वन्ते > विद्वित होता है
विद्वौ = तोड़ा, खंडित किया
विद्वुडे = घनाया
विद्व > विद्व
विध वसेपा > विधिवशैपा (भाविनी कर्म रेखा), यह विधि के वश में है ।
विद्वरजित > विद्वर्जित
विद्वै > विद्व
विद्याली > व्याली, सर्पिणी
विधना = विधना, विधाता
विद्वध > वृद्ध
विलंबैली > विलंबित हुई है, लटकी हुई है
विल्यायं = विलागया, नष्ट हो गया
विलोवै = मधता है
विसन जेन > विष्णुर्जेन (जिसने विष्णु को)
विसरज > विसर्जन
विसृक् > विशोक
विहंडनं > विखंडन, नाशक
विहूनां > विहीना
वीरज्यं > वीर्य
बुईला = बहने पर, चलने पर
बूची = कनकटी, बिना कान की
बूक्ति = समझ कर
बेदन > वेदना
बेली = लता
बेवरा > व्यौरा
बेसा > वेदया
बैदभी = वैद्यक
बैसिना = बैठना

बैसी = बैठी

बैसण = बैठना

बोड' > ओम्

बोहित } = नाव
बोहूत्र }

बौडामता = पागल, बौडम

बिधना = बिधाता

भंडसि = भंडता है, बुरा करता है

भंडारै = भंडार में

भंडै = भंडित करता है

भषिक > भक्षक

भगरड़ी = भौंग

भमार = भण्डार

भराला = भराया

भाणे } भंडित करता है, नष्ट करता है
भाणै }

भावनी > भाविनी, होनेवाली

भाठा > भ्रष्ट

भाठी = भट्टी

भायं = भाया, अच्छा लगता है ।

भार्थ } = भारत
भारथ }

भावरि भोजन > खूब भावयुक्त भोजन,

भास्ये = भाषणा

भिष्णाडण > भिक्षाटन

भिनि > भिन्न

भुंजिवा = खावोगे

भुस = भूसा

भुंहु = (१) भौंह (२) भुंहुं करना = भोकना

भुषइली = बुभुक्षित, क्षुधित

भुयंग अहारी = साँप के समान आहार करनेवाला, हवा पीकर रहनेवाला

भूरा > भ्रमर, भौरा

भूखरु = भूख

भूषीसुर > भूकेश्वर, महाकाल, शिव

भेषारी = भेष धारण करनेवाले, भिक्षा जीवी

भेवं > भेद

भोगवै > भोगाता है

भोजल = भवजल, भवसागर

भौदू = भौदू, मूर्ख

मंभै = मुझे

मंडानं = मंडन, शृंगार

मगर > मकर

मडलोक > मृत लोक

मढी = मृता

मढली } छोटी मढियां
मढी }

मत्तिवार } = मतवाला
मतिवाला }

मतस > भक्तस्य

मृदंग स्कीजै (?) = (जिससे) मर्दन किया जा सकता है ।

मदभारथ = मदमत्त होकर लड़ना

मनकड > मर्कट, बन्दर

मनराहू } > मन राजा
मनराहू }

मनि = मन में

ममड़ी = ममता

ममारं > ममकार, ममता

मृघ > मृग

मरदक > मर्दक, मसलनेवाला

मरम > मर्म

मलंग = फर्कार, विरक्त

मलतन—शरीर रूपी मल

मसकीनं > मिस्कीन, अकिंचन, कंगाल

म्हारी = मेरी

- मांगल > मांगल्य, मंगल गान
मांडौं > मंडित या शोभित करना
मांण > मान
माकड > मर्कट, बंदर
माघ > मार्ग
मानेप > मनुष्य
मालं > माली
म्रिगानी = मृग (समूह)
मीडकी = मेडकी
मीज > मेद ?
मुं चाते = छोड़ा
मुंजली = मूँज
मुगध > मुग्ध, मोहग्रस्त
मुरदार = मुर्दा, वेजान
मुरेष > मूर्ख
मुलमाधर = मुलम्मा धारण करने वाला, ढोंगी
मुसक = कस्तूरी
मुसिया = मूसने वाला, ठग
मुंडता = मुंडित
मुंदड़ी > मुद्रिका
मूलकार > मूलश्रीकार
मूरेकनी = जस्तूरी का
मेन्हंत = डालता हुआ, उंडेलता हुआ
मेल्ह = डाला, फेंका
मैंगल > मदगत्र, मदमत्त हाथी
मैड़ी > मंडित, सुंदर
मैवांसा = किला
मोक्ष्य > मोक्ष
म्रित > मृत्यु
यंळ्या > इच्छा
यन्त्री > इन्द्रिय
यागरणं > जागरण

- येते = जितने
रंने > अरण्ये, वन में
रघुवैद > ऋग्वेद
रङ्गा = चिह्नया
रघर > रुधिर
रलाह > (१) कलाकर, (२) मिलाकर
रस्यौं = रहुँगा
रहनि = आचरण
रहसि = रहस्य
रामैं = राम कौ
राफसनी = राक्षसी
राङ्गिया > रक्षित
राते = (१) रत, रमा हुआ, (२) लाल
राव = राजा, रईस
रासी > राशि
राह मंडल > राहु मण्डल
रिंगनी = रेंगनेवाली, सरकनेवाली
रिप > ऋषि
रिणवासं = रनिवास
रिवरिदै = लिबलिबा
रूपांत = वृक्षों में
रूमस = रूपवती
रैति = रेती
रोम चलित्र = रोम चरित्र
लंब = लंबा
लंबिका = लटकने वाली
लई = इसलिये
लब्धा < लब्ध
लङ्गि > (१) लक्ष्मी (२) > लक्ष्य
लवधि = (१) लुब्ध होकर (२) लब्धि, िति
ल्यौलीना = लवलीन
लहुड़ा > लघु, छोटा

लार > लाला
लालं=लाल
लियते } > लीयते, लीन होता है
लीयतं }
लुण्णै=लुनता है, फाटता है
लूपा=रूखा
लूचा=लुच्चा
लेब > रज्जु
लेव = लेना
लोहडे = (१) लोहा (२) लहू-रक्त
लोहीं = लहू, रक्त
वधैली = वर्द्धित हुई, बढी
वहौ अकारं > बहु आकार (वाला)
वाघनि > व्याघ्रिणी
विकलपौ > विकल
विबोवै > देखता है
विटंमते = विडंबन करता है ।
विधातो > विधाता
विमर्ण > विवर्ण
विमर्ण > विमनाः, अन्यमनस्क, उदास
विवरी = विव्रत ?
विसंभर > विश्वंभर, जगत्पालक
वोछी = ओछी
वोउभै > वूभै
वौसन्तर > वैश्वान्तर, अग्नि
श्रव > सर्व
संऊअल > संसार
संक्या > शंका
संष > सांख्य, तत्त्वज्ञान
संषड़ी = संस्कृत, शुद्ध
संगर = युद्ध
संगला द्वीप = शाकल द्वीप

संध > संधि
संपुष्ट = परिपुष्ट
सत्रनी = शत्रु (स्त्री)
सति सति = सत्य सत्य
सति मा=सौतेली माँ
सदायवो=सताना
सनद > संधि
सप्रत सलता > सप्त सरिता
सपता > सप्त
सवली > शबरी
सभ > सर्व
सर्मद > समुद्र
समग्यो = उमगा
समानी = प्रवेश किया
समो > सम, बराबर
सरपे = सर्प
सरवस्वालिफं > सर्वस्वालीक सब-कुछ मिथ्या है ।
सरासेत = चिता की सफेदी
सगत्रै = सड़ाता है
सरीरसूं = शरीर से
सलवा=दूर करना, छीन लेना
सलिता > सरिता
सलेपमा > इलेपमा

स

सल्मल > शात्मलि (द्वीप)
सत्रायो = संवारा, बनाया
सहनांणों = सहिदानी
सहलै = सहन किया
सहू = सत्र (अ०-‘साहु’)
सहेली = (१) प्रेमिका, साथी, (२) से
सांठि = पूंजी
सांधि > संधि

साइर > सागर

साष्पावंत = शाखा वाले (२) साक्षात्

साथरडै > स्तर, चटाई

साथर > स्तर, विछौना

सार=लोहा

सारीषा = समान

साही = साही जंतु

सिगरफ = ईगुर

सिउ = से, सौं

सिभ > सिंह

सिखा > शिखर

सिख्या = (१) शिष्य (२) शिक्षा

सिपर > शिख

सिड > शृङ्ग

सिड़ी = सनकी

सिधा > सिद्ध

सिरसाही = शिरीज

सिहीणी = सिंहनी

सीक्या = सेंका

सीजै = (१) सींभता है, (२) सिद्ध होता है

सुकल > सु-कुल

सुकाई = शुकदेव

सुपमनां } > सुपुम्णा (नाड़ी)

सुपमनि } > सुपुम्णा (नाड़ी)

सुगुणां > सुगुण

सुच्या > शुचिता, पवित्रता

सुध = (१) सुधि, खबर, (२) > शुद्ध

सुधीरं=धीर

सुपन > स्वप्न

सुमेंरे=सुमेरु (को)

सुसुतिं > सरस्वती

सुरता > श्रोता

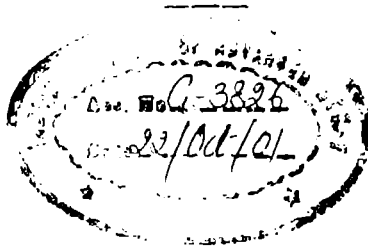
सुरति > प्रीति, स्मृति, अन्तर्लान होने का भाव
सुरिवां = सुरमा
सुलिप > स्वल्प
सुसंच = सुसंचनीय
सुसमवेद > स्वसंवेद्य, अनुभव से प्राप्त ज्ञान
सूचा > शुचि, सारवान्
सूफल > सुफल
सूभर < सुभर, पूर्ण
सूरिवां = सुरमा, वीर
सूवा > शुक्
सेत > स्वेत
सेती > से
सँवार > शैवाल
सेली = सेली
सौद्धि = चादर
सौरां = कपटी ?
स्यंघ > सिंह
स्यंभ > स्वयंभू
स्वाधि अस्थान > स्वाधिष्ठान
स्वार > सवार
स्वारे = सँवारता है
स्वेतरज > स्वेदज
स्वैल्यौ = सोश्रोगे
हृदे > हृदय
हृवैस्यै = होगा
हाँगि वृधि > हानि वृद्धि
हाजराकूँ हजूरि = हाजिर के सामने
हालर = हिलोर
हिन्न = श्रव
हेठ = नीचा
होइस = होगा

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	टि० १	प्रति से	'ग' प्रति से
४	१०	अनह घु	अनहद्यु
४	१६	विहड	विहंड
४	२७	त्ततं	तत्तं
५	३०	विस रज	विसरज
६	१	ब्रह्म अ गनिव } जरांग सी क्या }	ब्रह्म अगानि } वज्रांग-सीक्या }
	८	तव भाजि	तव भाजि
	११	सू रां मनवानै	सूरां मनवां नै
	१६	गोध लो	गो छलो
	टि० अंतिम पंक्ति	भाञ्जि	भाजि
१०	१३	काणोरी	काणोरी
	टि० १	”	”
११	६	मनअंनी	मनवां नी
	१६	काणोरी	काणोरी
१२	४	विछोहया	विछोह्या
१४	४	माठी	भाठी
१६	८	बाहुडौ	बाहुडौ
	१६. २०	थिरं तां	थिरतां
२०	२८	साथ रडै	साथरडैं
२१	८	सेज या	सेज्या
२१	६	पुर विस्पे	पुरविस्पे
२६	४	वौ उमे	वौज्मै
३०	६	बसा	बेसा
३०		विगता	विगूता
४४	८-६	जाग्रत राथान	जाग्रत रा थान

(६)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	१२	ब्रह्मंड	ब्रह्मंड
	१५	आहारी	अम्हारी
४५	१६	मोष्य	मोष्य
४७	४	अम्है	अम्है
६४	१६	स्यंभ	स्यंभ
८७	१२	श्रवण	श्रवण
६६	२५	मृघ	मृघ
१०३	१२	अस्त्री जो निंदीयते	अस्त्री जोनि दीयते
१०८	१४	ऐन	ए न
१०६	६	विलो गना	विलोग ना
११४	२	उडिसी	उडिसी
११४	४	थण	थङ
११७	११	अर्मल	अर मल
,,	१८	गिर ही	गिरही
११६	३	सूरि वाँ	सूरिवाँ
१२०		निरतार नौ	निरनारणौ
१२०	११	दवा दस	दवादस
	२५	भया रे	भया रे
१२८	१६	कै साले रे	कैसा ले रे
	२४	विल मेली	विलमेली



— — — — —

•

— — — — —

•



Library

IAS, Shymla

MSH 811.12 H 127 N



G3826